कालपृष्ठ पर अंकित [खंड - 3]

सामाजिक यथार्थ और मानवीय सरोकारों की कविताएँ

[डा. महेंद्रभटनागर]

(बदलता युग / 39)

रचना-काल: सन् 1943-52

250 गिर नहीं सकती
251 मिटाते चलो
252 कुर्बानियाँ
253 तूफ़ान
254 सर्वनाश
255 बंगाल का अकाल
256 नौ-सैनिक विद्रोह
257 जय हिन्द
258 विकल है देश
259 साम्प्रदायिक दंगे
260 आज़ाद मस्तक को उठा लेता
261 दमित नारी
262 साम्प्रदायिक विष
263 हम एक हैं
264 एकता
265 हिन्दू-मुस्लिम
266 संयुक्त बनो
267 विवशता में
268 युद्ध-क्षेत्र पर
269 देशी रजवाड़े
270 मलान सावधान
271 अफ़सोस है
272 विरोधी शक्तियाँ
273 मिल मज़दूर
274 जनवाणी
275 बदलता युग
276 नया प्रकाश
277 आज तो

278 बदल रही है

279 मुस्कान के रंग

280 मेरे देश में

281 रक्षा

282 धरती की पुकार

283 मालवा में अकाल

284 अमन की रोशनी

285 जंगबाज़

286 ज़िन्दगी कैसे बदलती है

287 नयी नारी

288 मुक्ति-पर्व

(अभियान / 26)

रचना-काल: सन् 1942-49

289 मशाल

290 बन्धन-मुक्त

291 ग्रीष्म

292 मृत्यु-दीप

293 वैषम्य

294 पराजय

295 व्यष्टि

296 अन्तर-ज्वाला

297 बेबसी

298 प्रलय-संगीत

299 कवि

300 युग-कवि

301 संघर्ष

302 मेरी आहें

303 चेतना

304 तरुण

305 नारी

306 देश-दीपक

307 बलिया

308 प्रभंजन

309 परिवर्तन हो

310 नया सबेरा

311 साधक

312 खेतिहर

313 खेतों में

314 अभियान

(विहान / 17)

रचना-काल: सन् 1941-45

315 जलो-जलो

316 जागो

317 बलिपंथी

318 नव-पथ-राही

319 अन्तर्राष्ट्रीय गान

320 युग-गायक

321 अभय

322 युग-कवि

323 जय बेला

324 शांतिलोक

325 नया संसार

326 क़ैदी

327 नयी कला

328 नवयुग

329 नव-जीवन

330 हरिजन

331 भिखारिन

(तारों के गीत / 1)

रचना-काल: सन् 1942

332 तारों से

.

(250) गिर नहीं सकती

.

गिर नहीं सकती कभी

विश्वास की दीवार !

निर्मित तप्त जन-जन के लहू से,

वज्र-सी / फौलाद-सी

दृढ़ हड्डियों से;

नींव के नीचे पड़े

कातर अनेकों मूक जन-बलिदान !

.

यह विश्वास
जीवन के नये भवितव्य का
धुँधला नहीं निस्सार !
गिर नहीं सकती कभी
अगणित प्रहारों से
नये विश्वास की दीवार !
.
वर्षों बाद
की निविड़ान्धकार सुरंग
जन-चेतना की शक्ति से
द्रुत पार,
ज्योतिर्मय हुआ संसार,
धधका सत्य का अंगार,
लोहे-सी खड़ी
जन-शक्ति की दीवार !
.
त्रस्त-शोषित-सर्वहारा-वर्ग
रक्षा के लिए
अपना उठाये सिर;
चुनौती दे रही उसको —
सतत साम्राज्य-लिप्सा-रक्त-नद में
वर्ग जो डूबा हुआ।
.
वह गिर नहीं सकती कभी
जन-संगठित-बल की नयी दीवार !
टकरा लौट जाएगी विरोधी धार !
बारम्बार लुण्ठित,
खा करारी हार !
.
•
(251) मिटाते चलो
.
सदियों के बंधन मिटाते चलो तुम,
तम के ये परदे हटाते चलो तुम,
अवरुद्ध राहों के पत्थर सभी ये
निर्झर सदृश सब उड़ाते चलो तुम !
.
विष दासता का पिलाया गया जो,

शोषण का कोल्हू चलाया गया जो,
असफल सभी नीति ऐसी करो
जिससे उठे सिर, दबाया गया जो !
.
जन-युग समर्थक, प्रजातंत्र का बल
शत-शत स्वरों से यह गुंजित हो प्रतिपल,
जनपद जगे ले विजय की मशालें
श्रम से अभावों के फट जायँ बादल।
.
• •
(252) कुर्बानियाँ
.
विश्व के परतंत्र देशों की
जटिल दृढ़ शृंखलाएँ
टूटने को
आज झन-झन बज रही हैं !
आज प्रतिक्षण रण,
अमित कुर्बानियाँ
स्वातन्त्र्य-हित
प्रतिपल मचल कर हो रही हैं !
.
सिर्फ़ —
मरघट में चिताएँ हैं
शहीदों की,
नहीं ज्वाला बुझी,
धू-धू भयंकर और भीषण
        हो रही है,
        जल रही है,
        बढ़ रही है !
.
यह उमड़ता ज्वार जनता का
कहीं पर रुक सका है ?
स्वर —
अवनि गिरते हुए तारक सरीखा,
क्या किसी भी घोर रव से
दब सका है ?
.
युद्ध की आवाज़,

एटम बॉम्ब का है नाम !
पर, ललकार —
इण्डोनेशिया छोड़ो,
भगो,
बर्मा व हिन्दुस्तान छोड़ो !
एशिया क्या —
विश्व के लघु राष्ट्र सारे,
एक बिगड़े सिंह जैसे
जग उठे हैं !
एक घायल साँप जैसे
फन उठाये दीखते हैं !
अन्त है फ़ासिज़्म का,
औ' नष्ट होने जा रही हैं
विश्व की साम्राज्यवादी शक्तियाँ !
.
शोषण दमन का चक्र
जो अगणित युगों से चल रहा था,
आँख मींचे
फेक्टरी के बॉयलर में
कोयले के स्थान पर
श्रम-जीवियों के,
शोषितों के,
पद-दलित नत नीग्रों के
प्राण झोंके जा रहे थे
स्वार्थ-लोलुप-देश निर्दय !
.
आज वे सब
फड़फड़ा कर उठ रहे हैं !
घृणित दुखदायी हुकूमत को
पलटने उठ रहे हैं !
.
जो खड़े इनके शवों पर
तुच्छ रजकण से गये बीते समझकर
और बन कर बेरहम
करते रहे मर्दित पदों से,
लड़खड़ा कर गिर रहे हैं

एक करवट से !
.
उठे अब धूल से औ' रक्त से रंजित,
चाहते —
अधिकार, आज़ादी, व्यवस्था।
पतित मानव की प्रगति का
चित्र सुन्दरः रूप अभिनव।
साम्य का संगीत गूँजे,
रोक बन कर जो खड़े हैं —
आज
तूफ़ानी प्रबल आघात,
विप्लव ज्वाल,
प्रतिपल दृढ़ हथौड़े से
निरंतर चोट खाकर,
एक पल में बुद्बुदों-से,
आह भर
मिट जाएंगे।
.
ध्रुव सत्य —
जनता की विजय।
संक्रांति के जो इन क्षणों में
छा रही जड़ता, निराशा
वह नहीं वातावरण होगा,
प्रगति की आश का
दुर्दम प्रभंजन
विश्व के पीड़ित उरों में
दौड़ जाएगा प्रखर बन।
.
• •

.
समय संक्रांति का,
असफल निराशा का,
अधूरे स्वप्न ले मानव,
अधीर अशांति में
प्रतिपल विकल साँसें,
दमन के दिन

रहे हैं गिन,
रहे हैं गिन।
.
मिटा समुदाय सारा
खा गया है ज़ंग,
दीमक और फोड़ों से
हुआ जर्जर, हुआ जर्जर !
बिगड़ दोनों गये हैं लंग्स।
.
हिंसक और भक्षक
व्यक्ति का भीषण,
शुरू अब हो गया है नाच,
नंगा नाच !
जिसके पैर के नीचे
मनुजता का दबा है वक्ष,
क्रन्दन की पुकारें और आहें
बन रहीं
तबलों-मजीरों की घमक,
निर्दय कुचलता जा रहा है
आज !
पैरों से मसलता जा रहा है
आज !
दोनों हाथ जो अपने
डुबोकर रक्त में
होली मनाए,
क्रूर भूतों-सी हँसी हँसता
ज़मीं पर
वार कर हर बार
निर्मम बन
गिराता है रुधिर की धार !
सारा लाल है संसार !
सारा चीखता संसार
रो-रो आह भरकर आज!
.
देखो बढ़ रहा तूफ़ान !
करने विश्व को आज़ाद,

देने को नया जीवन,
बसाने साम्य की दुनिया
मिटाने दुःख की घड़ियाँ।
युगों की
सख़्त काली लौह की कड़ियाँ
बजीं झन-झन,
बजीं झन-झन !
हुईं सब ग्रन्थियाँ ढीली,
खुले बंधन !
.
कि बोला अब नया इंसान —
जनता राज ज़िन्दाबाद,
जनता को मिले अधिकार !'
सारे विश्व में
स्वातन्त्र्य झंझावात —
बहता तोड़ता
प्राचीन-चिन्तन बाँध,
राजा, काल्पनिक भगवान, डिक्टेटर
हुकूमत के ज़माने के
कफ़न पर कील अन्तिम
ठुक चुकी है आज।
जीवन जागरण के गान के स्वर
विश्व के प्रत्येक कोने से
सुनायी दे रहे हैं आज !
आया मुक्ति का तूफ़ान !
पूरे हो रहे अरमान !
अभिनन्दन !
प्रगति की शक्तियाँ सारी
तुम्हारे साथ !
दुर्दम मुक्ति का तूफ़ान !
निश्चय जीत का वरदान !
बढ़ता आ रहा तूफ़ान !
.
• •
(254) सर्वनाश
.
हिल गया तल तक

कि चारों ओर,
चीखा जन-समुन्दर घोर !
.
कण-कण ध्वस्त पर
क्रोधित हुए हैं लाल भीषण नेत्र,
जन-जन का उबलता ख़ून,
हिंसक बन गये कानून !
सम्मुख क्रूरता नर्तन
पतन का आज चरमोत्कर्ष
भीषण दानवी संघर्ष है दुर्द्धर्ष !
.
दुर्बल बाहुओं में
शक्ति का संचार,
नूतन वेग !
दृढ़ इंसान जम कर छीनता अधिकार !
स्वर — युग-धर्म का गूँजा,
मनुज सन्मुख प्रहारों से बिगड़ जूझा,
सबल 'ग्रेनाइट' से बंधन झुके,
रज-मेड़ से टूटे बहे
'लोयस' सदृश - जिसका न बस,
आ चीर दे कोई,
उड़ा दे देह —
बहता जल, मृतक-सा मेह !
घना कुहरा समाया
दिग-दिगन्तों में,
कि चारों ओर — आये घोर
दृग को बन्द करते अंध,
क्रोधित बन गरजते घन
घुमड़ते हैं, उमड़ते हैं,
कि दुर्दम साथ में
तूफ़ान भी आया !
पकड़ लो प्राण !
मेरे हाथ,
दुर्गम पंथ से चलकर
भयंकर नाश का सामान लाया
आज यह तूफ़ान !

.
कहते कापुरुष हैं डर
कि है सब व्यर्थ
सारी शक्ति, साहस अर्थ !
यह क्षण में कुचल देगा,
अभी देंगे दिखायी हम
अवनि-लुण्ठित, धराशायी !
हमारी चीख की आवाज़ भी देगी
नहीं बिलकुल सुनायी।
.
क्योंकि ये हुंकारते हैं मेघ,
भीषण सनसनाती आँधियाँ,
काले क्षितिज पर
कड़कड़ाती बिजलियाँ,
औ' शीत की तलवार-सी है धार,
जिसमें सब जकड़ कर हिम
खोकर चेतना जड़वत्
बना निष्क्रिय
हमारे प्राण का कंपन
हमारी धमनियों का रक्त !
.
• •
(255) बंगाल का अकाल
.
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !
.
घुल रहे हैं किस तरह विद्रोह रोके चिर-बुभुक्षित,
होश में हैं मौन मुरदे आज रोते क्यों मरण हित ?
वृन्तच्युत कोमल तड़पते भूख से शिशु-प्राण अंबुज,
पेट की ख़ातिर यहाँ सर्वस्व नारी बेचती निज,
और हैज़ा दीखता है आज कितने ही नगर में,
हैं बिछी अगणित कतारें हाय! लाशों की डगर में,
तड़पते अरमान इनके रोटियों की चाह में ही,
सो गये हैं जो सदा को एक व्याकुल आह में ही,
कौन देखे ? कौन रोये ? सड़ रहे मानव घरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !
.
कह रहा जग आज सारा — न्याय क्या, अन्याय है

आज का शासन कहाँ असहाय है, निरुपाय है ?'
ओ मरण के अस्थि-पंजर ! आज बल अपना दिखा दो,
घोर विप्लव ही मचा दो, आज सागर को हिला दो,
मौन है उच्छ्वास कह दो आज उनसे, 'पुनः जागो !'
छीन लो अधिकार अपने, दीन बनकर कुछ न माँगो,
क्रूर अत्याचार जग के साम्य के पथ से हटा दो,
तोड़ युग के पूर्ण बंधन क्रांति की ज्वाला जला दो !
रूप ऐसा ओ प्रवर्तक ! आज हांे लपटें करों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !
.
मंदिरों ने, मसजिदों ने क्या किसी को भी बचाया ?
सांत्वनामय धैर्य इनका क्या किसी के काम आया ?
धर्म के पोथे करोड़ों सड़ रहे हैं नालियों में,
आज चाँदी के न टुकड़े हैं प्रसादी थालियों में,
ईश पर विश्वास कैसा ? कौन ले अवतार आया ?
ढोंग मंदिर, ढोंग मसजिद भूल यह, 'गुण गा न पाया।'
भाग्य का लेखा ? नहीं, वह था यही केवल बहाना
लूटना या चूसना था, या हमें उल्लू बनाना,
हाय ! मानव अधमरे ही, बह रहे हैं निर्झरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !
.
हो रहा है नृत्य पथ पर, हो रहा रोदन कहीं पर,
बन रहे सुख-दुख भयंकर, मूक है जीवन यहीं पर
कह उठेगी मूर्ख दुनिया, 'विश्व का ही यह नियम है,
भाग्य में इनके लिखा था, ईश की लीला विषम है।'
भूल है, जो कह रहे हैं, स्वार्थ का संसार उनका,
चल रहा है यह युगों से खोखला व्यापार उनका,
आज अंतिम दृश्य देखो नाट्य-घर बंगाल में आ,
जाग विप्लव, जाग नवयुग अस्थि के कंकाल में आ,
आज धड़कन, आज कंपन हो बुभुक्षित के उरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !
.
• •
(256) नौ-सैनिक विद्रोह
.
मचली हिन्द सागर में सबल विद्रोह की लहरें
हिन्दुस्तान को छूने चली आतीं बिना ठहरें !

.
जब बंगाल की खाड़ी, अरब सागर हिले डोले
सदियों के दमित सीने नया दृढ़ जोश पा बोले !
.
लेंगे छीन आज़ादी कि हममें शक्ति है इतनी,
लो प्रतिशोध युग-युग का कि ज़ुल्मों की कथा कितनी !
.
नौ-सैनिक चले मिलकर जहाज़ों को उड़ाने को,
भीषण गोलियाँ बरसीं गुलामी को मिटाने को !
.
'गोरे' आततायी सब छिपे डरकर सभी भागे,
दुश्मन कौन था जो आ सका बढ़ कर वहाँ आगे !
.
जन-जन मुक्ति-आन्दोलन मशालें जल उठीं अगणित,
पशु-बल जा छिपा उल्लू सरीखा बन भयातंकित !
.
नव-आलोक से सारी दिशाएँ जगमगायी थीं !
नूतन चेतना से सब दिवारें डगमगायी थीं !
.
धक्का शक्तिशाली जब लगा जन-तंत्र का नारा,
सागर पार सिंहासन गया हिल राज्य का सारा !
.
सड़कों पर पड़े अगणित क़दम फ़ौलाद से दुर्दम,
जाग्रत देश के जन-जन अथक लड़ते रहे हरदम !
.
कीं कुर्बानियाँ तुमने उठायी आँधियाँ भीषण
जिससे कट गये जकड़े गुलामी के सभी बंधन !
.
लपटें जल उठीं दुगनी, पड़ा जब-जब दमन-पानी,
औ' प्रतिरोध भी दुगना बढ़ा, की ख़ूब मनमानी !
.
यह साम्राज्यवादी गढ़ विकल हो बौखलाया था,
जिसने शक्ति का कण-कण कुचलने में लगाया था !
.
लेकिन बुझ न पायी जो वतन ने आग सुलगायी,
बरसों की बढ़ी जिसमें पुरानी जुड़ गयी खाई !
.
• •
(257) जय हिंद!
.

हिंद फौज़ का स्वतन्त्र वीर
गिरि, समुद्र, वन विशाल चीर,
मृत्यु-द्वार-सा मिला समीर,
आफ़तें कठिन, चरण रुके न
पंथ पर, सदा बढ़े प्रवीण !
.
मुक्त राष्ट्र का सप्राण गीत,
जागरण प्रकाश में अतीत,
पर्व है महान, यह पुनीत,
हिन्द की विजय सही, जहान
रूप बन चला स्वयं नवीन !
.
• •
(258) विकल है देश
.
गुलामी से विकल है देश, यह निष्प्राण-सा सारा,
उदासी और असफलता, पलायन का हुआ नारा !
.
दुखी, ठंड़ी मरण साँसें, मलिन जीवन, अमित बंधन,
कृशित तन, नग्न, मरणासन्न, कुंठितमन-निराशा क्षण !
.
प्रगति अवरुद्ध, विपदा लक्ष, शोषण है मनुज बंदी,
मिटा बिगड़ा समाजी तन, पतन की है लहर गंदी !
.
दशा युग की करुण है, आज वाणी में नहीं बँधती,
नहीं बँधती, विषम है साधना स्वर में नहीं सधती !
.
पड़ी कटु फूट आपस में, नहीं है मेल किंचित भी,
निरंतर बढ़ रहे नव दल, विभाजन है नवीन अभी !
.
कहाँ जनता ? पड़ी निर्जीव-सी बनकर, घिरा है तम,
निजी कुछ स्वार्थ में अंधे मनुज बस पूजते कि अहम् !
.
सिपाही छोड़ दो आलस, कहीं दुश्मन न खा जाये,
नहीं अब नींद के झोंके, बुरी हालत न आ जाये,
.
तुम्हारे देश के दीपक बुझाए जा रहे हैं जब,
नज़र के सामने लाकर मिटाए जा रहे हैं जब !
.

खड़े हो नाश के अन्तिम किनारे पर, सरल गिरना,
कि दुश्मन एक धक्के से मिटा देगा यहाँ वरना !
.
• •
(259) साम्प्रदायिक दंगे
.
नगर-नगर व गाँव-गाँव में, दहक रही यह आग है,
डगर-डगर व पाँव-पाँव पर, भभक रही यह आग है !
.
कि आसमान चीरती हुई, विनाश की हवा चली,
हुआ अधीर, लाल-लाल बन जहान, सृष्टि सब जली,
.
कराहती व चीखती सनी हुई यह रक्त से गली-गली,
मनुज विवेक हीन, हिंस्र हो गया कठोर, जंगली !
.
कि ख़ून आँख में, कटार का कटार से जवाब है,
कि बस, यहाँ स्वच्छंद मज़हबी गँवार ही नवाब है !
.
न दीखती कहीं मनुष्य में ज़रा समीप लाज भी,
वही लिए कराल आदि जानवर शरीर आज भी !
.
असभ्य मद-प्रमत्त डोलती हैं हिंसकों की टोलियाँ,
सुलग रही असंख्य बेक़सूर व्यक्तियों की होलियाँ !
.
जलन के दर्द से कराहती औ' काँपती वसुन्धरा
कि आज एक बार फिर जगी चँगेज़ की परम्परा !
.
कि आज एक बार फिर उखड़ रहे हैं बेशुमार घर !
कि आज एक बार फिर दिलों में छा रहा निरीह डर,
.
उतर रहे हैं मौत घाट लाख-लाख बालकों के सर
कि खा रही पछाड़ विश्व-माँ लुटी हुई सिहर-सिहर !
.
मनुष्य का कठोर रूप यह भयावना है किस क़दर,
कि धर्म जाति गत प्रभाव का ज़हर उगल रहा ग़दर !
.
स्वदेश छोड़, अश्रु साथ ले ये चल पड़े हैं काफ़िले
अनेक रोग ग्रस्त, चोट त्रस्त हैं, अनेक अध-जले !
.
कि रोक लो शहीद बन तमाम औरतों की आबरू !

महात्मा, पटेल, शेख, राष्ट्र-कर्णधार नेहरू !
.
रुको प्रगति, विकास और राष्ट्रीयता के दुश्मनो !
गुलाम-वृत्ति अब नहीं, रुको स्वतंत्रता के दुश्मनो !
.
तुम्हें क़सम है चाँद की, तुम्हें क़सम है पाकतम क़ुरान की,
तुम्हें क़सम ज़मीन की, तुम्हें क़सम है आसमान की!
.
मदद करो निरीह की उठो न, क्योंकि कर्बला के वीर हो,
अरब महान देश के बहादुरो! उठो कि तुम अमीर हो !
.
शिवा-प्रताप की परम्परा के पुत्र तुम बदल गये,
महानता के स्वप्न को लिए हुए कहाँ फिसल गये ?
.
तुम्हीं वतन की शान-बान को गिरा रहे, मिटा रहे,
कि हिन्द की उदार भावना स्वयं घटा रहे !
.
कि मेल से रहो, यही करीम और श्याम की पुकार है,
कि एक हिंद हो यही रहीम और राम की पुकार है !
.
• •
(260) आज़ाद मस्तक को उठा लेता
.
लूट हिंसा का मनुज पर जब नशा छाया,
रूप ले हैवान का मज़हब उतर आया,
रक्त की इन्सान की यदि प्यास बुझ जाती
ख़त्म हो जाती बनी नेतागिरी माया !
.
इसलिए विद्वेष का झण्डा उठाया है,
क़त्ल करने का घृणित नारा लगाया है,
मतलबी साम्राज्यवादी चंद लोगों ने
देश को मेरे क़साई घर बनाया है !
.
आग की लपटें गगन में घिर घहरती हैं
जल रहे गृह, रूह जन-जन की सिहरती है,
मौत की आवाज़, मनहूसी समायी है,
भूमि पर सरिता हलाहल की लहरती है !
.
आज तो गुमराह पागल झुण्ड मदमाते

शस्त्रा ले फरसे छुरे हिंसक, चले आते,
दृश्य भीषण नाश का बर्बर मचाते जो
गीत, पर, अल्लाह या हनुमान का गाते !
.
मिट गये सब वृद्ध नारी शिशु व रोगी तक,
शर्म है जो छीन जीने का लिया है हक़,
आततायी शक्ति ने हा! क्रूर निर्दय बन
स्वार्थ के हित में मिटाये शांति के साधक !
.
भग्न औ' वीरान कर डाले अनेकों घर,
यन्त्रणा निष्ठुर रुधे हैं आज भय से स्वर !
जल रहे धू-धू नगर सब ग्राम जीवित जन
चाहिए उजड़े हुओं को त्राण का अवसर !
.
क्या पता था देश का यह भाग्य आएगा !
दूर हो अंग्रेज़ बैठा मुसकराएगा !
काट डालेंगे गले, लड़ आज आपस में !
हिंद की औलाद को यह रूप भाएगा !
.
आँधियाँ बंगाल के नभ में उठी थीं जब
रोक लेना था मगध प्रतिशोध का विप्लव !
फिर न पड़ती देखनी पंजाब की पशुता,
और यह सीमान्त के निर्दोष मानव शव !
.
आज सड़कों पर खड़ी है मौत की दहशत,
नग्न भूखी राह में जनता पड़ी आहत,
क्षीण जर्जर त्रस्त दुर्बल उन्मना व्याकुल,
आत्म-गौरव, आत्म-वैभव नष्ट है आनत !
.
व्योम में उठती मुसीबत की किरण चमकी !
रक्त की छाया दिशाएँ लाल हो दमकीं,
फ़ैसला है आज किस्मत की अनेकों का
ज्वाल बढ़ती जा रही है, जो नहीं कम की !
.
सृष्टि का संघर्ष क्षण प्रत्येक धड़कन का
स्नेह पावन से मिटा दो शेष मद रण का,
हो, चुका नरमेध मानवता जगो, गाओ !
मुक्ति का संगीत, आशा गीत जीवन

.
आज तो बेचैन अस्त-व्यस्त है तन-मन
यह न होनी बात, नाशक देख आयोजन !
गर्व से आज़ाद मस्तक को उठा लेता,
लड़ गया होता विषमता से कहीं जीवन !
.
• •
(261) दमित नारी
.
मिट्टी-मिट्टी बोल रही है !
बोल रही हैं नंगी काली ऊँची चट्टानें,
बोल रहे हैं सूखे-सूखे रक्तिम नाले,
चीख़ रही है सरिता-सरिता —
.
लानत है इंसान !
किया तुम्हीं ने नारी पर
अत्याचार प्रहार,
लानत है
युग-युग की चिर संचित संस्कृति,
जिसकी पशुता ने
नारी की अस्मत पर हाथ उठाया !
.
लानत है मज़हब
जो बनता मानवता का पहरेदार,
जिसने दुर्बलता पर हावी हो,
आज किया मनमाना भक्षक व्यापार !
घृणित ख़ुदा के बोल सभी ;
क्योंकि केवल वे ही ज़िम्मेदार
कि जिनने जन-जन की नस में
भर दिया भयंकर विष
जो निकला फूट
मनुजता की नींव हिला,
जिसकी आज विषैली ज्वाला
कोने-कोने में फैल गयी है;
मन के नैतिक बंधन
जिसने ढीले कर डाले हैं !
सोच नहीं सकता कोई,

पागलपन के उठे बगूले
काँपी धरती, कण-कण काँपा,
आसमान से तारा-तारा काँपा!
.
पर, रुक न सका
हैवानों का चलता चक्र अरे !
जिसने नारीत्व
धरा पर लुण्ठित कर,
माँ पर हाथ उठाया,
बना दिया विधवा-विधवा !
पुत्र विहीना !
घायल-घायल
रो-रो सूख गये हैं जिनके आँसू,
सूख गये हैं केश कहीं
ख़ूनी धारों से,
सूख गये हैं होंठ !
तुम्हारी निर्मम आवाज़ों से
भयभीता नारी
गिन-गिनकर
साँसें छोड़ रही है !
.
वह देश असभ्य —
किये जिसने ऐसे काम,
वह इंसान नहीं इंसान,
पशु से भी बदतर है !
जिसने मातृत्व किया पद-मर्दित,
नारीत्व किया अपमानित,
निर्बल से खिलवाड़ !
.
• •
(262) साम्प्रदायिक-विष
.
आज नूतन शक्ति का संचार !
नस-नस में फड़कता जोश
दुर्दम मानवी दृढ़ !
होश की करवट
कि देखा सामने मरघट,

पड़ीं लाशें मनुज की,
चीत्कारें !
.
ध्वस्त गृह अट्टालिकाएँ,
धूल उड़ती,
नाश की चलती हवाएँ,
ख़ून के सागर
धरा पर बह रहे,
ज्वालामुखी लावा उगलते,
हो रहा है मृत प्रलय
ताण्डव प्रखर!
.
गिरते धरा पर शीश अगणित
वार से होकर पराजित,
अवनि लुण्ठित, चरण मर्दित,
थूक ठोकर से मसलता
आदमी जब आदमी को
तब जगे हैं प्राण !
उन्मद वेग ज्वाला
सर्व भक्षक क्रूर लपटें
आ गयीं जब, खा गयीं जब,
युग-युगों की शक्ति,
संचित धन, मनुजता !
.
जो कभी सोचा न हो मन में
कभी देखा नहीं हो स्वप्न तक में,
क्रूर बर्बरता, हिला दे दिल !
जगत इतिहास के
सौ-वर्ष तक के युद्ध
फीके बालकों के खेल
बन कर रह गये, उपहास !
होगा, सच, नहीं विश्वास !
हिंसा का, मरण अतिरेक !
घिस गया चंगेज़ !
फीका पड़ गया तैमूर !
औ' औरंगज़ेबी ज़ुल्म ढह

जलियानवाला बाग !
हिसक आततायी
लोमहर्षक, क्रूर,
फैली रोशनी के, सामने
'सरवर गुलामी'1 ज़ुल्म !
.
(1. पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) का तत्कालीन साम्प्रदायिक नेता।)
• •
(263) हम एक हैं
.
तूने कर दिया बरबाद
मेरे देश का वैभव
कि मेरे देश का गौरव !
.
मुझे है याद—
मेरी भूमि पर बहता कभी था
नीर-सा घी-दूध,
जैसे आज बहता
युद्ध के मैदान में
पेट्रोल अथवा ख़ून !
जन-जन तृप्त थे
निश्चिंत,
जीवन में सुखी !
.
पर, आज
तूने कर दिया मुहताज,
भूखों मार !
दुख, आतंक,
गोलों और तोपों का भरा भंडार !
.
लड़ते देश के बालक
झगड़ गोबर सरीखी चीज़ के ऊपर !
.
धृणित !
तूने जमाया पैर माँ के वक्ष पर,
जिसके करोड़ों लाल
हिन्दू और मुस्लिम को लड़ाया,
फूट का बो बीज,

भू-सम्पत्ति का विक्रय !
.
नया भावी मनुज,
जब नीति तेरी
याद किंचित भी करेगा तो —
उबलकर क्रोध से अपने,
भरे प्रतिशोध ज्वाला,
दाँत लेगा पीस !
अपने बाप-दादों की
मरण-सी बेबसी पर,
अश्रु की धारा बहाकर !
तोड़ देगा गर्व सब !
.
पर, आज तो ये आँख मेरी
देखतीं वह दृश्य —
जीवन में
कभी भी स्वप्न तक में
जो न सकता सोच !
क्या मिट सभ्यता सारी गयी ?
वर्षों हमारी साधना का -
एकता का प्रयत्न,
सब साहित्य का वरदान,
मिट्टी हो गया ?
.
होना असम्भव है !
रुकेगी यह नहीं आवाज़ —
'सब इंसान जग के एक हैं !
हम एक हैं !
.
• •

.
कर्बला प्रयाग है,
प्रयाग कर्बला !
क़ुरान वेद की नसीहतों से
व्यक्ति का करो भला !
टले अशुभ घड़ी

व मृत्यु भय बला !
.
कि जाति-द्वेष छोड़कर उठो,
कि धर्म-द्वेष छोड़कर उठो,
वतन की एकता के वास्ते,
वतन की नव-स्वतंत्रता के वास्ते !
.
महान हिंद की महानता बनी रहे !
उदार हिन्द की उदारता बनी रहे !
.
सभी दिलों की चाह जो
वही सतत किये चलो !
महान ध्येय के निमित्त तुम
जलो, जलो, जलो !
.
• •
(265) हिन्दू-मुसलमान
.
एक है सबका ख़ुदा, जिसने बनाये जीव सारे !
.
ख़ून की नदियाँ बहाकर
देश की रक्षा न होगी,
धर्म का ले नाम यों पथ-
भ्रष्ट मानवता न होगी,
सभ्यता का हार जिसमें
उच्च भावों को पिरोये
हैं युगों से क़ीमती मोती
अनेकों प्राण खोये।
.
एक होकर ही रहेंगे, हिन्द तेरे जन-सितारे !
.
भूत सिर पर छा गया
हैवानियत का क्रूर निर्दय,
शक्ति का आह्वान कर
जागो, मनुजता की कहो जय !
छोड़ संयम हो गये सब
क्रोध से हिंसक व निर्मम
और भाई का गला भाई

गिराता है, यही ग़म,

.

याद करलो, उस ख़ुदा को हैं सभी जन-प्राण प्यारे !
एक है सबका ख़ुदा, जिसने बनाये जीव सारे !

.

• •

(266) संयुक्त बनो

.

अपने ही हाथों से अपने हमने आज कुल्हाड़ी मारी,
ग़लती पर ग़लती कर आज जुए में जीती बाज़ी हारी,
ले न सके हम वह जिसके पाने के युग-युग से अधिकारी;
दिल टूक-टूक होता है, यह निर्मम कितनी रे लाचारी !
मेरा देश बँटा है टुकड़ों में अनगिन,
समझूँ जन-जन की आज़ादी या दुर्दिन ?

.

आज़ादी हित हमने अगणित अविराम महा बलिदान किये,
जलियाँवाला कांड सहा, औ' ममता के बंधन छोड़ दिये,
चुप कि कराह न उठने दी थी पीड़ा के सारे घाव सिये,
विपदाओं के बादल हँस-हँस हमने अपने ही शीश लिये,
पर, यह भारत माता तो आज अभागिन,
नाची है रणचण्डी आ क्रूर पिशाचिन !

.

सन उन्नीस-सौ-बयालीस उठाया जनता ने आन्दोलन,
'भारत छोड़ो' के नारे पर फाँसी झूले आ मुक्त-तरुण,
पशुबल की गोली से हिल काँप उठा था यह सम्पूर्ण गगन,
हम मतवाले थे आज़ादी के अविचल निर्भय सैनिक बन ;
जब जूझे दुश्मन से, हम मरते गिन-गिन !
विधवा होती जाती थीं, हाय सुहागिन !

.

जन-जन निर्भय हो अत्याचारी अंग्रेज़ों से जूझा था,
बच्चों, माता, पत्नी और पिता का डर न कहीं सूझा था,
वापस भग आने के कायरपन को न किसी से पूछा था,
इनने अपने बीहड़तम पथ को न किसी से झुक बूझा था,
निकली थीं बनकर अबलाएँ अभिशापिन,
कूदीं रण-ज्वाला में बनकर उन्मादिन !

.

'लीगी' वाले भारत को अगणित काफ़िर 'नीरो' सिद्ध हुए ;
जिनके 'क़ौमी' प्रचार से एके के सब पथ अवरुद्ध हुए,

अतएव प्रगतिशील प्रखर जनबल दुर्दम संस्कृत क्रुद्ध हुए ;
अच्छे और बुरे के फिर ऐसे विनष्टकारी युद्ध हुए
हावी होकर आया कटु य' कसाईपन
मज़हब का नंगा नाच हुआ खन-खन-खन !
.
निर्दयी बनी दीवानी, भोली जनता औ' गुमराह बनी,
आपस में काट रहे आज गले भूमि रक्त से हाय सनी,
ललकार उठा तब सरहद्दी सूबे में पठानसिंह 'गनी',
हर जन-तन्त्र बसाने वाले की छाती फूली और तनी,
गांधी, खान, जवाहर रोकेंगे क्रन्दन,
आराजकता का हो जग से आज मरण !
.
दिन दूर न होगा जब नक्शे से ख़ुद पाकिस्तान हटेगा,
ऊँचे-ऊँचे भवन गिरेंगे शोषण, पूँजीवाद मिटेगा,
शक्तिमना अविजित उन्नत मेरा यह हिन्दुस्तान बनेगा,
हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सबका है यह देश, जगेगा,
गले मिलेंगे भेद भूल कर ये जन-जन
खिल जाएगा रे सूखा उजड़ा उपवन !
.
फिर हम देंगे जग को अपनी नूतन संस्कृति का ज्योति दान,
सत्य, अहिंसा, औ' चर्खे का गाएंगे हम उन्मुक्त गान,
फैलेगी सारे लोकों में भारत की सुन्दर श्रेष्ठ शान,
उठो-उठो अब ओ मेरे बन्दी चिन्तित देश अमर महान !
अखंड, संयुक्त बनो ! मुक्त करो जीवन !
जर्जरता मिट जाये, आये नव-यौवन !
.
• •
(267) विवशता में
.
विवशता की
असह उन मूक घड़ियों में
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें !
कि फिर
युग-युग पिपासित होंठ पर जग के
बहें मधु स्नेह के झरने !
मनुजता के पतन-निर्मित

अँधेरे के समय-पट पर,
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें !
.
बहा ले जा घृणा के तृण,
अरी झेलम, अरी गंगा !
क्षितिज से उठ रहीं लपटें,
महा बर्बर विनाशी आपसी दंगा,
लुटेरा है खड़ा नंगा !
.
कि काले मेघ आओ तुम
कि काले मेघ छाओ तुम,
बरस लो आज झर-झर-झर,
कड़क कर आततायी के
हृदय में आज भर दो डर,
गिरा करका,
ढहा दो सब अशिव के गढ़ !
अरे ओ, त्राण के दुर्दम चरण !
उठ-चढ़
फिसलनी इन बड़ी ऊँची दिवारों पर,
समूची शक्ति के बल पर,
कि तेरे दृढ़ प्रहारों से
लगे ढहने,
सभी दीवार ये गिरने !
गगन को चीरती आएँ तभी
निर्देश पथ को दूर से
करती हुई किरणें !
तभी बाहें उठें तेरी
सभी पीड़ित उरों की गोद में भरने !
.

सदियाँ बीत जाएंगी,
कि नदियाँ सूख जाएंगी,
धरा यह डूब जाएगी,
नयी धरती उभर कर शीघ्र आएगी,
मगर विश्वास है इतना—

विरासत में मिलेगी यह
तुम्हारी भूमि की संस्कृति,
इसे केवल न जानो इति।
उठो ऐसा न हो मानव
भविष्यत् थूक दे तुम पर,
बनो मत मूक,
पशुता के चरण पर
नत नहीं हो शीश !
यह आशीष
दोनों ने दिया है —
शाप ने, वर ने।
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें !
.
• •
(268) युद्ध-क्षेत्र पर
.
खंडहर हैं, खंडहर है, खंडहर !
शिलाएँ टूटतीं भू पर !
.
भयंकर ध्वंस निर्मम,
धूम्र-तम है,
अग्नि की भीषण शिखाएँ लाल
इधर-उधर !
कि कर्ण परदा फाड़ता है स्वर !
.
मिटाता साथ में सब
खेत, गृह, अट्टालिकाएँ, जीर्ण कुटियाँ,
क्रूरता, विस्फोट,
बॉम्ब को पटक,
झपट लटक उतर पेराशूट से
ले शीघ्र निर्मम
नाश के कटु यंत्र,
ये सब भूत से बन
मानवों के पूत,
ख़ाकी वर्दियों में रौंदते हैं

वक्ष दुनिया का।

.

आँसू रक्त की है धार !
सारा लाल है संसार !
चारों ओर धुआँ-धार !

.

• •

(269) देशी रजवाड़े

.

प्रतिगामी, जनता के दुश्मन
जो जन-बल के सदा विरोधी,
जिनने जनता के शव पर चढ़
किया अभी तक चैपट शासन !

.

जन घोर उपेक्षा, लगा दिया
यहाँ ज़मीदारों का जमघट
अंग्रेज़ों को शीश झुकाया
औ' भारत का अपमान किया !

.

राजा और नवाब विलासी
महलों में सुख के भर साधन,
फ़ौज़ पुलिस के गुर्गों से जो
लगवाते जन-जन को फाँसी !

.

ख़ुद निश्चिन्त हमेशा रहते
उठता रहता है कहीं धुआँ,
जलते गाँव, उजड़ जाते जन
अकाल, बीमारी को सहते !

.

करते रहते जो मनमानी,
अपने औ' पुरखों के फोटो
औ' स्टेच्यू पथ में लगवाते
पर, न लगी है झाँसी की रानी !

.

एक नवाब बनाता मसज़िद
आर्य-समाज न बनने देगा,

धर्मों की संकीर्णता बढ़ी,
छीने हैं हक़, यह कैसी ज़िद !

.

यह भारत जब आज़ाद हुआ
तब इनने भी यह ही चाहा;
हम आज़ाद बनें, पर न पता
अंग्रेज़ मरा, बरबाद हुआ !

.

पनपा इनकी सीमा में बढ़
हिन्दू, मुस्लिम, हरिजन में घुस
जाँति-पाँति का भेद भाव रे
ये प्रतिक्रियावादी दृढ़ गढ़ !

.

ये हिजड़े कायर लड़ न सके !
जब अग्रेंज़ी राज बना था,
मुट्ठी भर 'गोरे' बढ़ते थे,
ये कर न सके कुछ, सिर्फ़ झुके !

.

चलती आयी अब तक सत्ता
संगीनों के, गोलों के बल,
अब न टिकेगा ताज कहीं भी
जाग उठा हर पत्ता-पत्ता !

.

'शेरे कश्मीर' बना हर जन
ट्रावनकोर, हैदराबाद कि
भोपाल व कश्मीर शत्रु हैं
अतएव करो जन-आन्दोलन !

.

फिर भारत में जनतंत्र जगे !
जनता का राज बने ऐसा,
हिल न सके जब आये झंझा,
ये ताज पटक कर शीघ्र भगें !

.

.

मिटी नहीं अभी
मनुष्य की पशुत्व-वृत्ति,
ले रहा अशान्त श्वास
जंगली हृदय मलान
रंग-भेद के बुझे हुए चिराग़ पर !
गये नहीं अभी
समाज से विचार —
रक्त-पान के
अपार लूट के, खसोट के,
'सुवर्ण' की विनष्ट शान के
मनुष्य के मनुष्य पर प्रहार मौत के !
.
असभ्य दासता प्रथा बनी रहे,
'सुवर्ण' चाह
आज भी बना रही सवेग योजना,
गले पुकार कर रहे
अशक्त सृष्टि-स्वप्न घोषणा दहाड़ !
.
ले विनाश शस्त्र-बल शरण,
सहस्र राक्षसी चरण
विषाक्त साथ में घृणा पवन,
अनीति ढोल
बन्द कर श्रवण
प्रमादवश
बजा रहा, बजा रहा !
गुलाम विश्व के
मिटे हुए असार चिन्ह
फिर बना रहा !
ज़मीन पर न, आसमान में
क़िले बड़े-बड़े असीम
कर रहा सृजन !
उबल रहा मलान का
प्रखर सुधार श्वेत-रक्त,
गॉड का महान भक्त,
गौर-वर्ण-जाति का नवीन दूत
यह ग़लत कि वह मनुष्य बीच भूत !

.

अजेय शक्ति उठ रही,
नवीन ज़िन्दगी मचल रही,
विनाश का धुआँ
बिखर-बिखर अनन्त में समा रहा,
विरोध-मेघ व्योम घेर कर लहर रहे,
मनुष्यता उतर रही,
नये समाज का विधान हो रहा !
बड़ा कठिन लकीर पीटना
वही —
पुराण जाति-भेद, रंग-भेद की !
मलान सावधान !

.

• •

(271) अफ़सोस है!

.

अफ़सोस है, अफ़सोस है !

.

उजड़ा हुआ संसार है,
रोदन यहाँ हर द्वार है,
बिगड़ा हुआ, पीड़ित, दुखी, मिटता हुआ समुदाय है !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

.

भीषण क्षुधा की ज्वाल है,
सूखी जगत की डाल है,
अम्बर-अवनि में गूँजता बस एक ही स्वर, 'हाय है' !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

.

नीरस मनुज का गान है,
झूठा लिए अभिमान है
गतिहीन जीवन है जटिल, असहाय है, निरुपाय है !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

.

• •

(272) विरोधी शक्तियाँ

.

घेर रहा है जग को प्रतिपल, उठता जड़ता का काला तम,
बढ़ता जाता है जीवन में, अतिशय क्रन्दन, अतिशय विभ्रम,
छाते जाते अविरल नभ में, काले, भयग्रस्त, अमा-से घन,
मति खो, अनियन्त्रित आज बना निष्प्राणित, अपमानित जीवन !
.
रोक रहा है कौन उठा कर, आज भुजा से जन का इंजन !
गति प्रेरक पहियों में, अवनति-हित कौन रहा है भर उलझन ?
बर्फ़ीली आँधी में जीवित मानव धधका सेंक रहा है ?
कौन दिवाकर-दीपित मुख पर, परदा, ढकने, फेंक रहा है ?
.
किन पापों की रात क्षितिज से, पथभ्रष्टा बन उतर रही है,
डायन-सी प्रतिमा लेकर, नव युग की झोली कतर रही है,
कौन विरोधी-धारा, फैली बस्ती पर आ दौड़ रही है,
कौन विरोधी धारा, नूतन, दीवारों को तोड़ रही है ?
.

किसने इस क्षण आभा को कर म्लान, अँधेरे से मन जोड़ा,
अक्षय संचय जिससे रह-रह कर होता जाता है थोड़ा !
जूझो युग के सजग पथिक तुम थक जाने का अवसर न अरे,
रे नाविक ! विधि सोचो ऐसी, जिससे युग-नौका आज तरे !
.
• •
(273) मिल-मज़दूर
.
लम्बी-लम्बी
चैड़ी-चैड़ी
हलकी नीली
कुछ मटमैली
गड्ढों वाली
टूटी-टूटी
डम्बर की सड़कें
रोज़ सबेरे तड़के
मीलों के उन
मज़दूरों से
ख़ूब खचाखच
भर जाती हैं !

.
अगणित नारी,
बालक, नर
रोटी लेकर
हँस-हँस कर
जल्दी-जल्दी
सिर्फ़ मशीनों की
धुनबुन में
बढ़ते जाते हैं
रोज़ क़तारों में !
.
उस काले-काले
इंजन-सा ही
जिनका जीवन
धड़-धड़ करता
दौड़ रहा है !
किस्मत अपनी
फोड़ रहा है !
.
मैले-मैले
कपड़े पहने,
वे क्या जानें
कैसे गहने ?
कपड़ों के निर्माता
वैभव के निर्माता
पर अध-नंगे
और अचानक
एक दिवस फिर
आहें भर कर
होकर जर्जर
भूखे नंगे
चल देते हैं
स्वर्ग-पुरी को !
बेहद महँगा
जिनका बनता
मरघट का क्रम !

.
ऐसे मानव
बालों में भर
कानों में भर
रूई के कण,
आँखें मलकर
डगमग करते
बढ़ते जाते,
जीवन से डट
लड़ते जाते,
पर्वत छाती
चढ़ते जाते,
टीले ऊँचे
खंदक नीचे
चलते जाते,
गरमी सरदी
वर्षा ओले
तन को खोले
औ' बिन बोले
जीवन भर औ'
हँस-हँस कर
आघात निरंतर
भीषण तर
सहते जाते !
.
आबाद रहे
यह धरती भी
हर रोज़ भरें
ये राहें सब,
हर रोज़ छुए
यह धूल चरण
इन मानव की
इस महिमा पर !
.

.

जो जन-जन के भावों और विचारों को वहन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

.

तम का छाया-नर्तन
आतंक भरा शासन
जन-जागृति ज्योति-किरण
करती है निर्वासन,
जो हर अवरोधी सामाजिक ताक़त का दमन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

.

शोषक-वर्ग भुजाएँ
नाशक तेज हवाएँ
मेघों-अस्त्रों से कर
नव-शक्ति प्रहार प्रखर,
जो जन-बल के सम्मुख श्रद्धा आदर से नमन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

.

उठते गिरते हरदम
नंगों भूखों का श्रम,
क्षण भर होकर आहत
पर, पा लेता क़ीमत,
जो सामूहिक पीड़ा, आँसू, क्रन्दन को सहन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

.

सुनकर उठते विप्लव,
बिछ जाते भू पर शव,
उठता ज्वाला भैरव,
गुंजित कर क्रन्दन-रव,
जो गिरती दीवारों पर नूतन जग का सृजन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

.

वेग रुके जन बल का,

स्वर बनकर हलचल का

छा जाता अम्बर में

धरती पर घर-घर में,

जो दुनिया की शोषित जनता का एकीकरण करे

वह जनवाणी है !

वह युगवाणी है !

.

• •

(275) बदलता युग

.

लो बदलता है ज़माना !

.

ज्वाल जग में लग गयी है,

आग जीवन की नयी है

जल रहा है जीर्ण जर्जर टूट मिटता सब पुराना !

लो बदलता है ज़माना !

.

ध्वंस की लपटें भयंकर

छा रहीं सारे गगन पर

वेग अन्धाधुन्ध है जिसका असम्भव है दबाना !

लो बदलता है ज़माना !

.

बढ़ रहा प्रत्येक जन-जन,

रोशनी में मुक्त कन-कन,

वास्तविकता सामने आयी, न अब कोई बहाना !

लो बदलता है ज़माना !

.

रोष इससे तुम करो ना,

द्रोह साँसें भी भरो ना,

यह सतत बढ़ता रहेगा, व्यर्थ काँटों को बिछाना !

लो बदलता है ज़माना !

.

• •

(276) नया प्रकाश

.
नया प्रकाश है
नया प्रकाश !
दीप्यमान ओर-छोर
अंधकार मिट रहा अछोर घोर !
.
वास्तविक स्वरूप नग्न सामने -
असंख्य क्षीण-दीन,
जीर्ण-शीर्ण
भग्न
सामने खड़े हुए
क़तार में मनुज !
धुआँ-धुआँ
घिरा !
.
कि आसमान में
घुमड़ रहे
डरावने विशाल मेघ !
चीरता हुआ गगन
नवीन विश्व का
नवीन शिशु निकल
समाज के प्रवीण रंगमंच को
निहार बढ़ रहा।
.
प्रकाश देख काँपती
परम्परा,
प्रकाश देख डगमगा रहीं
सकल पुराण रूढ़ियाँ !
.
नवीन चेतना,
नवीन भावना,
विचार नव्य-भव्य औ'
नवीन आश है !
नवीन आश है !
नया प्रकाश है,
नया प्रकाश है !

.

• •

(277) आज तो

.

आज तो चली अजब हवा
दब गया दमन का दबदबा,
भय विहीन,
है ज़मीन !

.

मात चाँद की अरे कला ;
शक्ति गीत गा रहा गला,
हर मलीन
है नवीन !

.

रूप है समाज का अजब,
हर मनुष्य है स्वतंत्रा अब,
ना अधीन
है न दीन !

.

• •

(278) बदल रही है

.

बदल रही है आज हमारी
पहली नक़ली तसवीर,
(खाओ भूखो ! हलवा पूरी
और गरम मीठी खीर !)

.

बदल रही है आज हमारी
फटी पुरानी पोशाक,
(अब न कटाना जग के सम्मुख
अपनी यह ऊँची नाक !)

.

बदल रही है आज हमारी
डर की हलकी आवाज़,
(दूर बहुत ही दूर भगी है
अब तन की मन की लाज !)

.
बदल रही है आज हमारी
यह जाड़ों मारी शाॅल,
(आज बना लो भैया अपनी
मोटी नव-चादर लाल !)
.
• •
(279) मुसकान के रंग
.
दुनिया के जिगर से
जो उट्ठा था धुआँ
अब दहकते हुए शोलों में
बदल गया !
.
आयी थी जो आवाज़ कि पहले
अब उसका हर उतार-चढ़ाव
सब साज़ नया !
दिखता था
समुन्दर की जो छाती पर !
'भाटे' का उतरता हुआ जल,
अब तेज़ बड़ी लहरों में
पलट गया
बीत चुका
गुज़रा हुआ कल !
.
चेहरे पर थी जो
मूक मुसीबत की शिक़न
लाखों अपमानों की जलन,
अब मुसकान के रंगों की चमक
रोशन जिससे उन्मुक्त-गगन !
.
• •
(280) मेरे देश में
.
आज
मेरे देश के आकाश पर

काली घटाएँ वेदना की
घिर रही हैं !
कड़कड़ा कर गाज
टूटे,
फूस-मिट्टी के हज़ारों छप्परों पर
गिर रही है !
और गहरा हो रहा है
ज़िन्दगी की शाम का
फैला अँधेरा,
पड़ रहा
चमगादड़ों का, उल्लुओं का,
मौत के सौदागरों का,
ख़ून के प्यासे हज़ारों दानवों का,
ज़िन्दगी के दुश्मनों का
भूत की छाया सरीखा
आज डेरा।
.
कर दिये वीरान
कितने लहलहाते खेत
जीवन के,
सुनायी दे रहे स्वर
दुख, अभावों और क्रन्दन के !
.
करोड़ों मूक जनता
आज भूखी है,
विवशता के धुएँ में
मुश्किलों से साँस लेती है !
किसी के द्वार पर
दम तोड़ देती है !
कि निर्बल हड्डियों का
क्षीण पंजर छोड़ देती है !
.
• •
(281) रक्षा
.
डूबे गाँव,

बढ़ी है बाढ़ !
नदी के कूल गये पथ भूल,
कि चारों ओर
मचा है शोर !
सेठों के रक्षक-दल भागे
आगे-आगे,
बिड़ला-डालमिया ने
धोती-कम्बल बाँटे,
.
बनकर दान-दया के वीर !
चलाकर मीठे रस के तीर !
दिये हैं अपने घर के चीर !
कल जब बाढ़ बढ़ेगी और,
भगे-उखड़ों की नहीं मिलेगी ठौर,
तब ये बाहर आधे नंगे रहकर
अपनी बैठक दे देंगे सत्वर,
और स्वयं सो जाएंगे यों ही
खोल 'कला-सज्जित-कक्ष' गरम !
.
जल से भीग गये हैं खूब,
तभी तो काँप रही है देह,
नहीं उठते हैं आज क़दम
लख कर पीड़ा गये सहम !
मज़लूमों की रक्षा हित
सेवा करने निकले,
बेदाग़ पहन कर कपड़े !
देने आश्वासन —
न डरो,
हम कर देंगे सभी व्यवस्था
विधवा-आश्रम खुलवा देंगे,
धीरे-धीरे
सब का ब्याह करा देंगे !
मरे हुओं को गंगा-यमुना में
या लकड़ी-इंधन देकर
पार लगा देंगे।
सच मानों,

बेहद चिन्तित हैं प्राण,
हमारे कहते हैं अख़बार —
'अर्जुन, नवभारत, विश्वमित्र, हिन्दुस्थान' !
.
• •
(282) धरती की पुकार
.
उट्ठो युवको !
धरती तुम से जीवन माँग रही है !
जीवन तुमको देना होगा,
फिर चाहे
मोटी-मोटी हरियाली की लोई में
मुँह ढक कर सो जाना,
खेतों-खलिहानों के
अथवा
गेहूँ-चावल के
सपनों में खो जाना !
.
पर, आज अभी तो
जगना होगा,
पीली-पीली लपटों में
तपना होगा,
आगे-आगे
लम्बे-लम्बे क़दमों को
रखना होगा,
पथ के काँटों की नोकों को
फ़ौलादी पैरों की रेती से
घिसना होगा !
.
आओ युवको !
धरती तुमसे धड़कन माँग रही है !
बदले में जितनी चाहो तुम
उसकी ज्वाला ले सकते हो,
पर, अपने प्राणों की धड़कन
उसमें भरनी होगी !
यदि मृत्युंजय बनकर रहना है,

यदि निर्भय
अन्तर की बातें कहना है,
तो इस क्षण
अपने से ऊपर उठना होगा
फिर चाहे
हँसती दुनिया की तसवीर
बनाने में जुट जाना,
भूखों-नंगों को
अपनी बाहों में भर लाना !

.

• •

(38) मालवा में अकाल

.

अकाल-ग्रस्त मालवा !
हताश जन,
निराश जन
भूख, भूख, भूख !
नष्ट हो गयी फ़सल,
दर असल ?

.

दूर-दूर से,
उदास
छोड़ गाँव आ रहे
कुटुम्ब-के-कुटुम्ब,
और यह अवन्तिका नगर
कि कालिदास की प्रसिद्ध
कर्म-भूमि
घिर गयी अकाल से !
दैत्य भूख का खड़ा हुआ अकड़,
खोल सर्व-भक्ष्य-मुख !

.

पर,
अकाल है ग़रीब के लिए,
दर्द, भूख, त्रास, दुःख हैं
ग़रीब के लिए !
मिट रहा अशक्त सिर्फ़ वर्ग यह !

.
सेठ के मकान में भरा अनाज है,
ज़मीनदार के मकान में भरा अनाज है,
कौन जीव एक जो उदास ?
घूमते अबंध मूर्ख से कठोर,
लाल-लाल दाँत
पान से रँगे बता रहे
समूह-के-समूह का
निकाल रक्त पी चुके !
सफ़ेद वस्त्र
सूक्ष्म तार-तार से बना पहन
एक क्या अनेक कह रहे —
'कि मिल रहा न ज्वार-बाजरा।'
गेहुँ से भरी हुई
अजीब तोंद ले !
(विषम प्रयास स्वाभिमान का)
.
उठो किसान औ' मजूर
एकता तुम्हें बुला रही,
अकाल ग्रस्त-त्रस्त
जब समस्त मालवा !
.
• •
(284) अमन की रोशनी
.
युद्ध-अन्धकार-वक्ष फाड़
जगमगा रही
नवीन शांति की किरण !
जंगखोर-शक्ति के
तमाम व्यूह तोड़
बढ़ रहे
सशक्त विश्व के चरण !
आसमान में असंख्य हाथ
उठ रहे —
.
कि हम बिना

समस्त
युद्ध-सर्प-दंश काटकर,
व बर्बरों के हाथ से
सरल-सुशील सभ्यता-वधू
निकालकर
न चैन से कभी भी
बैठ पाएंगे !
असंख्य दृष्टियाँ लगी हुईं
नवीन राह पर,
कि हम
बिना प्रभात के हुए
व तामसी निशा
विनाश के हुए
(नहीं-नहीं !)
अपार नींद के समुद्र में
कभी न डूब पाएंगे !
क्योंकि बद्ध-द्वार
युद्ध-दुर्ग के खुले,
व शक्ति के प्रहार से
तमाम अस्त्र-शस्त्र
ध्वस्त हो रहे !
जंगबाज़
(जो कि विश्व का उलूक-वर्ग है)
अमन की रोशनी से
त्रास्त हो रहे !
.
• •
(285) जंगबाज़
.
लड़खड़ा रहे तमाम जंगबाज़,
टूटकर बिखर गया
कुचाल-साज़ !
.
जागरूक विश्व ने दिया रहस्य खोल,
असलियत बता रहा मनुष्य
पीट ढोल !

.
चोर और मुफ़्तख़ोर बौखला रहे,
सत्य और नेकनीयती बता रहे —
कि ख़ून हम बहा रहे
किसी न स्वार्थ-सिद्धि के लिए,
वरन्
स्वतंत्रता, विकास, लोकतंत्र के लिए !
.
पर, प्रकट हुए वहीं
अभाव रोग कोढ़
मौत-ग्रस्त भुखमरी,
अनेक आफ़तें बुरी-बुरी
सदैव ही रही घिरीं !
.
समझ गया
हरेक व्यक्ति आज
ये तभी
तमाम लड़खड़ा रहे हैं जंगबाज़ !
.
• •
(286) ज़िन्दगी कैसे बदलती है !
.
यह झोपड़ी है फूस की,
जिसकी पुरानी भग्न दीवारें,
व आधी छत खुली
इस रात में
जो है बड़ी ठंडी,
खड़ी है मौन, तम से ग्रस्त !
उसमें ले रहे हैं साँस
कोई तीन प्राणी,
हार जिनने
आज तक किंचित न मानी !
भूमि पर लेटे हुए,
गुदड़ी समेटे और गट्ठर से बने
निज ज्वाल-जीवन से हरारत पा
कुहर के बादलों में

गर्म साँसें खींचते हैं !
और उसका शक्तिशाली उर
दबाकर भेदते हैं !
भग्न यदि दीवार है
पर, भग्न आशा है नहीं !
विश्वास धूमिल
और दृढ़ आवाज़ बंदी है नहीं !
कल देख लेना
ज़िन्दगी कैसे बदलती है !
.
(287) नयी नारी
.
तुम नहीं कोई
पुरुष की ज़र-ख़रीदी चीज़ हो,
तुम नहीं
आत्मा-विहीना सेविका
मस्तिष्क हीना-सेविका,
गुड़िया हृदयहीना !
.
नहीं हो तुम
वहीं युग-युग पुरानी
पैर की जूती किसी की,
आदमी के
कुछ मनोरंजन-समय की
वस्तु केवल !
.
तुम नहीं कमज़ोर,
तुमको चाहिए ना
सेज फूलों की !
नहीं मझधार में तुम
अब खड़ी शोभा बढ़ातीं
दूर कूलों की !
.
अब दबोगी तुम नहीं
अन्याय की सम्मुख,
नयी ताक़त, बड़ा साहस

ज़माने का तुम्हारे साथ है !

.

अब मुक्त कड़ियों से
तुम्हारे हाथ हैं !
तुम हो
न सामाजिक न वैयक्तिक
किसी भी क़ैदखाने में विवश,
अब रह न पाएगा
तुम्हारे देह-मन पर
आदमी का वश
कि जैसे वह तुम्हें रक्खे
रहो,
मुख से न अपने
भूल कर भी
कुछ कहो !

.

जग के
करोड़ों आज युवकों की तरफ़ से
कह रहा हूँ मैं —
'तुम्हारा 'प्रभु' नहीं हूँ,
हाँ, सखा हूँ !
और तुमको
सिर्फ़ अपने
प्यार के सुकुमार-बंधन में
हमेशा
बाँध रखना चाहता हूँ !

.

• •

.

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हमारे चरण से
बँधी शृंखला दासता की
तड़क कर अवनि पर गिरी थी,
व सारे जगत ने
बड़ी तेज़ आवाज़ जिसकी सुनी थी,

कि जिससे
सभी भग्न सोये हुओं की
थकी बंद आँखें खुली थीं,
व हर आततायी के
पैरों की धरती हिली थी !
.
बुभुक्षित व शोषित युगों ने
नवल आश-करवट बदलकर
बड़ी साँस लम्बी भरी जो
कि भय से उसी क्षण
सुदृढ़ देश साम्राज्यवादी
सहम कर
मरण के क़दम पर गिरे,
और खोये
समय की सबल धार में !
.
क्योंकि निश्चय —
किसी पर किसी भी तरह
आज छाना कठिन है !
किसी को किसी भी तरह
अब दबाना कठिन है !
.
नयी आग लेकर यह जागा तरुण है !
विरोधी ज़माने से लड़ना ही
जिसकी लगन है !
.
यह वह दिवस है
कि जिस दिन हटा आवरण सब
हमारे गगन पर
नयी रोशनी ले
नया चाँद आया,
अँधेरी दिशा चीर कर
जगमगाया ;
बड़ा आत्म-विश्वास लाया —
नहीं यह तिमिर अब घिरेगा,
न आँखों पर परदा

प्रलय का गिरेगा,
न उर-वेदना
रात-भर नृत्य करती रहेगी,
नहीं दुःख की और नदियाँ बहेंगी !
.
उभरती जवानी नयी है !
वतन की कहानी नयी है !
रुकावट सहायक बनी है,
प्रखर युग रवानी यही है !
विजय की निशानी यही है !
.
यह वह दिवस है
कि जिस दिन नयी ज़िन्दगी ने
सहज मुसकरा मुग्ध
चूमे हमारे अधर थे !
खुले कोटि
अभिनव प्रबल मुक्त स्वर थे !
.
मनायी थीं हमने
विभा-ज्ञान-त्योहार खुशियाँ,
स्वयं आन तक़दीर नाची,
व हम गा रहे थे !
कि दुनिया के सम्मुख
बड़ी तेज़ रफ़्तार से बढ़
भगे जा रहे थे !
शिराओं में लहरें
नये ख़ून की भर !
निडर बन
सहारे बिना
और देशों को लड़ने की ताक़त
दिये जा रहे थे !
पुराने सभी घाव घातक
सिये जा रहे थे !
नयी भूमि पर
एक नव शांत बस्ती
बसाये चले जा रहे थे !

.
करोड़ों
सजग औरतों के नयन थे,
करोड़ों
सबल व्यक्तियों के चरण थे,
कि जो देश का चेहरा सब
बदलने खड़े थे !
बुरी रीतियों से
कड़ी आफ़तों से लड़े थे !
.
यह वह दिवस है
कि जिस दिन
हमारी हरी भूमि पर
फूल नूतन खिले थे !
व बरसों के बिछुड़े हुये
फिर मिले थे !
युगोंबद्ध
सब जेलख़ाने खुले थे !
कि हँसते हुए
विश्व-स्वाधीनता के सिपाही
विजय गान गाते
सुखद साँस भर
आज बाहर हुए थे !
.
अनेकों सुहागिन ने
जिस दिन को लाने
स्वयं माँग सिन्दूर पोंछा
वही यह दिवस है !
वही यह दिवस है !
.
सफल आक्रमण का
अथक त्याग, बलिदान, आन्दोलनों का,
जगत जागरण का,
क्षुधित नग्न पीड़ित जनों का,
दबी धड़कनों का !
.

• •

(289) मशाल

.

बिखर गये हैं ज़िन्दगी के तार-तार !
रुद्ध-द्वार, बद्ध हैं चरण,
खुल नहीं रहे नयन ;
क्योंकि कर रहा है व्यंग्य
बार-बार देखकर गगन !
भंग राग-लय सभी
बुझ रही है ज़िन्दगी की आग भी !
आ रहा है दौड़ता हुआ
अपार अंधकार !
आज तो बरस रहा है विश्व में
धुआँ, धुआँ !

.

शक्ति लौह के समान ले
प्रहार सह सकेगा जो
जी सकेगा वह !
समाज वह —
एकता की शृंखला में बद्ध,
स्नेह-प्यार-भाव से हरा-भरा
लड़ सकेगा आँधियों से जूझ !

.

नवीन ज्योति की मशाल
आज तो गली-गली में जल रही,
अंधकार छिन्न हो रहा,
अधीर-त्रस्त विश्व को उबारने
अभ्रांत गूँजता अमोघ स्वर,
सरोष उठ रहा है बिम्ब-सा
मनुष्य का सशक्त सर !

.

(290) बन्धन-मुक्त

.

बन्धन से तुमको प्यार न हो !
बंदी शत-शत बन्धन में यह उगता अभिनव संसार न हो!
बन्धन से तुमको प्यार न हो!

.

युगके सैनिक हो, क्रांति करो, नवयुगकी बढ़कर सृष्टि करो,
मानवता के संताप-क्लेश, पीड़ा, अभाव सब शीघ्र हरो,
बलिदानों की बलिवेदी पर डरना तुमको स्वीकार न हो!
बन्धन से तुमको प्यार न हो !

.

अगणित मानव सैनिक बन कर आर्थिक हमले में कूद पड़ो,
प्राणों का रक्त बहाने को युग-कवि ! गौरव का गान पढ़ो,
नूतन दुनिया में क्षणभर भी जनजन का जीवन भार न हो!
बन्धन से तुमको प्यार न हो !

.

फिर महाप्रलय के गर्जन से वसुधा का अंतर कंपित हो,
पूँजी की ज़ंजीरों में बँध अब और न जनता शोषित हो,
समता की दृढ़ तलवारों से वैभव पर बंद प्रहार न हो !
बन्धन से तुमको प्यार न हो !

.

यह दो-युग का संधिस्थल है संघर्ष छिड़ेगा वर्गों का,
सामाजिक-दर्शन बदलेगा, क्षय होगा स्थापित 'स्वर्गों' का,
दुःख कहीं तो एक ओर सुख का बहता पारावार न हो !
बन्धन से तुमको प्यार न हो !

.

• •

(291) ग्रीष्म

.

तपता अम्बर, तपती धरती,
तपता रे जगती का कण-कण !

.

त्रस्त विरल सूखे खेतों पर
बरस रही है ज्वाला भारी,
चक्रवात, लू गरम-गरम से
झुलस रही है क्यारी-क्यारी,
चमक रहा सविता के फैले
प्रकाश से व्योम-अवनि-आँगन !
तपता अम्बर, तपती धरती,
तपता रे जगती का कण-कण !

.

जर्जर कुटियों से दूर कहीं
सूखी घास लिए नर-नारी,
तपती देह लिए जाते हैं,
जिनकी दुनिया न कभी हारी,
जग-पोषक स्वेद बहाता है,
थकित चरण ले, बहते लोचन !
तपता अम्बर, तपती धरती,
तपता रे जगती का कण-कण !

.

भवनों में बंद किवाड़ किये,
बिजली के पंखों के नीचे,
शीतल ख़स के परदे में
जो पड़े हुए हैं आँखें मींचे,
वे शोषक जलना क्या जानें
जिनके लिए खड़े सब साधन !
तपता अम्बर, तपती धरती,
तपता रे जगती का कण-कण !

.

रोग-ग्रस्त, भूखे, अधनंगे
दमित, तिरस्कृत शिशु दुर्बल,
रुग्ण दुखी गृहिणी जिसका क्षय
होता जाता यौवन अविरल,
तप्त दुपहरी में ढोते हैं
मिट्टी की डलियाँ, फटे चरण !
तपता अम्बर, तपती धरती
तपता रे जगती का कण-कण !

.

• •

(292) मृत्यु-दीप

.

कौन-से दीपक जले ये ?

.

विश्व में जब सनसनातीं वेग से नाशक हवाएँ,
साथ जिनके आ रही हैं हर मनुज-सर पर बलाएँ,
हो रहा जीवन-मरण का खेल जब रक्तिम-धरा पर,
मिट रहे मानव अनेकों घोर क्रन्दन का जगा स्वर,

.

त्रस्त-पीड़ित जब मनुजता
कौन से दीपक जले ये ?

.

युद्ध के बादल गगन में, भूख धरती पर खड़ी है,
सांध्य-जीवन की करुण तम यह असह दुख की घड़ी है,
मृत्यु का त्यौहार है क्या ? विश्व-मरघट में जले जो,
स्नेह बिन बाती जलाकर शून्य में रो-रो पले जो ?

.

प्रज्वलित हैं जब चिताएँ
कौन-से दीपक जले ये ?

.

• •

(293) वैषम्य

.

नभ में चाँद निकल आया है !
दुनिया ने अपने कामों से
पर, विश्राम नहीं पाया है !
नभ में चाँद निकल आया है !

.

कुछ यौवन के उन्मादों में
भोग रहे हैं जीवन का सुख,
मदिरा के प्यालों की खन-खन
में उन्मत्त पड़े हैं हँसमुख,
वे कहते हैं, किसने इतना
जगती में सुख बरसाया है !
नभ में चाँद निकल आया है !

.

कुछ सूनी आहें ले दुख की
सौ-सौ आँसू आज गिराते,
हत-भाग्य समझकर जीवन में
अपने को ही दोषी ठहराते,
वे कहते हैं, जाने कितना
जग में दुख-राग समाया है !
नभ में चाँद निकल आया है !

.

• •

(294) पराजय

.

मिल रही है हार !

.

मनुज का व्यवहार क्या,
सभ्यता विस्तार क्या,
स्वार्थ की दुर्भावना से मिट रहा संसार !
मिल रही है हार !

.

ज्वार-पूरित पूर्ण सागर,
और नौका क्षीण जर्जर,
है बड़ा पागल मनुज जो तोड़ता पतवार !
मिल रही है हार !

.

खींचता प्रतिपल प्रलोभन,
मिट रहा है मुक्त-जीवन,
कह रहा, पर, छल भरे स्वर, 'आज नवयुग द्वार !'
मिल रही है हार !

.

• •

(295) व्यष्टि

.

मैं केवल अपने सुख-दुख का क्या गान करूँ ?

.

देव ! तुम्हारी जन-नगरी में
महानाश का तांडव नर्तन,
अगणित मनुजों की लाशों पर
क्रूर पिशाचों का पद-मर्दन,
अपने घावों का फिर मैं क्या आख्यान करूँ ?
मैं केवल अपने सुख-दुख का क्या गान करूँ ?

.

भय संस्कृति मिटने का प्रतिपल,
विश्व-सभ्यता पतनोन्मुख है ;
अस्थिरता, उथल-पुथल जीवन,
आशंका प्रतिक्षण सम्मुख है,

फिर अपने ही टिक रहने का क्या ध्यान करूँ ?
मैं केवल अपने सुख-दुख का क्या गान करूँ ?

.

जिसने बंधन स्वयं बनाये,
पग-पग पर घुटने टेक दिये,
या अपने ही हाथों बढ़कर
रक्ताप्लावित युग-प्राण किये,
उस मानव पर फिर मैं कैसे अभिमान करूँ ?
मैं केवल अपने सुख-दुख का क्या गान करूँ ?

.

• •

(296) अंतर-ज्वाला

.

अपने सुख को तजकर किसने संघर्षों को सिर मोल लिया ?
किसने निस्वार्थ, अभावों में निज तन-मन-धन से योग दिया ?

.

यह दुनिया अपनी ही जड़ता दुर्बलता से अनभिज्ञ रही,
जिसने अपने को बिन सोचे औरों की बातें खूब कहीं !

.

रोटी के टुकड़ों पर मानव का सर्वस्व दिया है लुटने,
जिसने, प्रतिहिंसा की ज्वाला में लाखों शीश दिये कटने !

.

अनगिनती अभिलाषाओं के पाने के अंध-प्रयासों में,
जिसने मानवता की परवा छोड़ी अपने अभ्यासों में !

.

पशुता का आदिम रूप वही उतरा है फिर से धरती पर
भीषण नर-संहार मचा है, गूँजा सामूहिक क्रन्दन-स्वर !

.

व्याकुलता जाग रही प्रतिक्षण सम्पूर्ण विश्व के आँगन में,
धधक रही है अंतर-ज्वाला नव-परिवर्तन की कण-कण में !

.

अब आने वाली है आँधी, कट जाएंगे जिससे बंधन,
अगणित शोषक-साम्राज्यों के भू-लुण्ठित होंगे सिंहासन !

.

• •

(297) बेबसी

.

आज पड़े प्राणों के लाले !

.

धरती पर वैषम्य बड़ा है,
हर पथ पर हैवान खड़ा है,
घोर-निराशा के जीवन में आज घुमड़ते बादल काले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

.

रोटी पर संघर्ष मचा है,
जिससे कोई भी न बचा है,
मानव, मानव से लड़ता है, ले भीषण हथियार निराले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

.

अब जगती में आग लगेगी,
विद्रोही हुंकार जगेगी,
क्या अब वैभव रह पाएगा जीवित, उन घड़ियों को टाले ?
आज पड़े प्राणों के लाले !

.

इतिहास बने बलिदानों का,
उत्सर्ग करो निज प्राणों का,
पीड़ित मानवता की जय हित, ओ कवि, प्रेरक गाने गा ले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

.

• •

(298) प्रलय-संगीत

.

आज तो हुंकार कर स्वर,
ज़ोर से ललकार कर स्वर,
जागरण-वीणा बजा, उन्मुक्त भैरव-राग से, मैं
गीत गाने को चला हूँ !

.

शीघ्र तोड़े बंधनों को,
तीव्र करदे धड़कनों को,
वेग से विप्लव मचाकर, सृष्टि करदे और नूतन ;
प्रेरणा दे, वह कला हूँ !

.

प्यार का संसार लाने,
शांति का उपहार लाने,
है युगों से व्यस्त जीवन, ध्येय को कर पूर्ण अर्पण
साधना में ही पला हूँ !

.

जो विघातक नीति जग की,
स्वाँग की जो प्रीति जग की,
आज इनको नष्ट करने का किया है प्रण हृदय से,
ज्वाल रक्षा हित जला हूँ !

.

• •

(299) कवि

.

मैं विद्रोही कवि, मैं नवयुग को निर्मित करने वाला हूँ !

.

मैं शिव बनकर सारी जर्जर सृष्टि भस्म करने को आया,
बस मस्ती से कंटक-पथ पर ही चलना मुझको भाया ;
धधक उठी लपटें धू-धू कर मेरे एकमात्र इंगित से,
अब मिट जाएगी दुनिया से शोषक-वर्गों की छल-माया,
नष्ट-भ्रष्ट कर सारे बंधन, लाया नव-जीवन-ज्वाला हूँ !
मैं विद्रोही कवि, मैं नवयुग को निर्मित करने वाला हूँ !

.

परिवर्तन का आकांक्षी हूँ, मन्थन कर सकता सागर का,
वह भीषण आँधी हूँ जिससे कँपता वक्षस्थल अम्बर का,
मैं नवयुग का अग्रदूत हूँ, नयी व्यवस्था का निर्माता,
मैं नवजीवन का गायक हूँ, साधक अभिनव प्राणद स्वर का,
सजग-चितेरा नव-समाज को मैं चित्रित करने वाला हूँ !
मैं विद्रोही कवि, मैं नवयुग को निर्मित करने वाला हूँ !

.

मैं अजेय दुर्दम साहस ले दृढ़ता से करता आन्दोलन,
थर-थर कँप जाता है जिससे अवरोधी धरती का कण-कण,
युग के अगणित संघर्षों में, उलझा रहता मेरा जीवन
जिन संघर्षों से व्याकुल हो मानव कर उठते हैं क्रन्दन,
मैं इन संघर्षों से निर्भय, वज्रों को सहने वाला हूँ !
मैं विद्रोही कवि, मैं नवयुग को निर्मित करने वाला हूँ !

.

• •

(300) युग-कवि

.

मेरे भावों का वेग प्रखर,
मेरी कविता की पंक्ति अमर,
मेरी वीणा युग-वीणा है
कब मौन हुए हैं उसके स्वर ?
मैं तो गाता रहता प्रतिपल !

.

मेरे स्वर में है आकर्षण,
आकर्षण में जाग्रत जीवन,
जीवन में आशा-कांक्षा का
रखता मादक नूतन यौवन,
करते जगमग लोचन निश्छल !

.

मेरा युग दीख रहा उज्वल,
नर्तन करते तारे झलमल,
जिसकी धरती पर बहती है
शीतल-धार-सुधा की अविरल,
छाये रहते जीवन-बादल !

.

• •

(301) संघर्ष

.

क्रांति-पथ पर बढ़ रहा हूँ द्रोह की ज्वाला जगाने !

.

आज जीवन के सभी मैं तोड़ दूंगा लौह-बंधन,
शोषितों को आज अर्पित प्राण की प्रत्येक धड़कन
स्वत्व के संघर्ष में, मैं पीड़ितों की जीत के हित
अब चला हूँ गीत गाने !
क्रांति-पथ पर बढ़ रहा हूँ द्रोह की ज्वाला जगाने !

.

दुःख-गिरि के दृढ़-हृदय पर आज भीषण वार करने,
चल रहा है मन, भंयकर मौत से व्यापार करने,
साथ मेरे चल रही हैं घोर तूफ़ानी हवाएँ—
राह - बाधाएँ हटाने !

क्रांति-पथ पर बढ़ रहा हूँ द्रोह की ज्वाला जगाने !

.

विश्व नूतन वेश लेगा दीखता जो क्षुब्ध जर्जर,
दे रहा जिसमें सुनायी सिर्फ़ क्रन्दन का करुण स्वर,
हूँ सतत संघर्ष रत मैं, रक्त से डूबी धरा पर
शांति, समता, स्नेह लाने !
क्रांति-पथ पर बढ़ रहा हूँ द्रोह की ज्वाला जगाने !

.

• •

(302) मेरी आहें

.

मेरी आहें, मेरी आहें !

.

इनमें ज्वाला जलती अविरल,
इनमें तूफ़ानों-सी हलचल,
ये विप्लव करने को चंचल,
मेरी आहें, मेरी आहें !

.

इनमें भूचालों-सा कंपन,
हैं विद्रोही दुर्जय भीषण,
ध्वस्त सभी कर देंगी बंधन,
मेरी आहें, मेरी आहें !

.

पीड़ित जनता की हैं संबल
स्वर्ग बना सकती हैं भूतल,
शस्त्रों-से बढ़ रखती हैं बल,
मेरी आहें, मेरी आहें !

.

ये आहें हुंकार बनेंगी,
दानवता से आज लड़ेंगी,
'डरना मत', हर बार कहेंगी,
मेरी आहें, मेरी आहें!

.

• •

(303) चेतना

.

प्रति हृदय में शक्ति दुर्दम,
मूल्य अपना माँगता श्रम,
जागरण का भव्य उत्सव,
सृष्टि का सब मिट गया तम !
.
विश्व जीवन पा रहा है,
गीत अभिनव गा रहा है,
कर्म का उत्साह-निर्झर
आज उमड़ा जा रहा है !
.
आज आगे मैं बढ़ूंगा,
आपदाओं से लड़ूंगा,
राह की दुर्गम सभी
ऊँचाइयों पर जा चढ़ूंगा !
.
• •
(304) तरुण
.
दुनिया के अगणित मुक्त-तरुण
बंधन की कड़ियाँ तोड़ रहे !
.
युग-जनता ने करवट बदली
आज़ाद गगन का मूल्य गहा,
जनता ने जाना-पहचाना
'कटु पशुबल का हो नाश', कहा !
जाग्रत मनुज लुटेरों के गढ़
रज-सम ढूहों से फोड़ रहे !
.
सम्मुख दृढ़ चट्टानें आयीं
पथ की बाधाएँ बन दुर्दम,
भीषण-शर के आघात हुए
नव-रूप मनुज पर छा निर्मम,
दानवता से जूझ रहे जन-
जन, दुख के बादल मोड़ रहे !
.
• •

(305) नारी

.

चिर-वंचित, दीन, दुखी बंदिनि !
तुम कूद पड़ीं समरांगण में,
भर कर सौगन्ध जवानी की
उतरीं जग-व्यापी क्रन्दन में,
युग के तम में दृष्टि तुम्हारी
चमकी जलते अंगारों-सी,
काँपा विश्व, जगा नवयुग, हृत-
पीड़ित जन-जन के जीवन में !

.

अब तक केवल बाल बिखेरे
कीचड़ और धुएँ की संगिनि
बन, आँखों में आँसू भरकर
काटे घोर विपद के हैं दिन,
सदा उपेक्षित, ठोकर-स्पर्शित
पशु-सा समझा तुमको जग ने,
आज भभक कर सविता-सी तुम
निकली हो बनकर अभिशापिन !

.

बलिदानों की आहुति से तुम
भीषण हड़कम्प मचा दोगी,
संघर्ष तुम्हारा न रुकेगा
त्रिभुवन को आज हिला दोगी,
देना होगा मूल्य तुम्हारा
पिछले जीवन का ऋण भारी,
वरना यह महल नये युग का
मिट्टी में आज मिला दोगी !

.

समता का, आज़ादी का नव-
इतिहास बनाने को आयीं,
शोषण की रखी चिता पर तुम
तो आग लगाने को आयीं,
है साथी जग का नव-यौवन,
बदलो सब प्राचीन व्यवस्था,
वर्ग-भेद के बंधन सारे

तुम आज मिटाने को आयीं !

.

• •

(306) देश-दीपक

.

देश दीपक
स्नेह आहुतियाँ,
दमन की आँधियाँ
पर, लौ लहर कर व्योम में
जलती रहे, जलती रहे !

.

शीश बलिवेदी सतत चढ़ते रहें,
परतन्त्रता-युग-तम बदल जाये
प्रकाशित मुक्ति के सुन्दर क्षणों में !

.

जीत के स्वर, शांति के स्वर,
और नव-निर्माण के स्वर
साधना चलती रहे, चलती रहे !

.

गुंजित गगन, मुखरित जगत हो,
इनक़लाबी दृढ़ दहाड़ें
चिन्ह अन्यायी हुकूमत का मिटा दें,
त्याग का, बलिदान का,

.

नव-प्रेरणा का ज्वार ऐसा
जन-समुन्दर में बहेगा जब
तभी यह क्रांति का इतिहास
निर्मित हो सकेगा !
तोड़ पाएगा तभी
परतंत्राता की लौह-कड़ियों को
बँधा, जकड़ा हुआ यह राष्ट्र !

.

बुझ गया यदि देश-दीपक,
तो अँधेरा क्या
मरण-अभिशाप होगा !
लूट का आरम्भ होगा !

घोर शोषण की कहानी का
प्रथम वह पृष्ठ होगा !
इसलिए —
बलिदान की है माँग,
आओ नौजवानो !
आज माता माँगती है
प्राण का उत्सर्ग !
धरती को बनाओ स्वर्ग

.

• •

(307) बलिया

(सन् 1942 की क्रांति का जन-गढ़)

.

यह जन-गढ़ है अविजित-दुर्दम, है खेल नहीं टकराना,
इसने न कभी अत्याचारों के आगे झुकना जाना !

.

हिमगिरि उच्च-शिखर-सा वसुधा पर अविचल आज़ाद खड़ा,
पशुबल की 'गोरी' सत्ता से क़दम-क़दम पर अड़ा-लड़ा !

.

मानवता का जीवित प्रतीक, आज़ादी हित मतवाला,
पड़ न सकेगा इसके मुख पर साम्राज्यवाद का ताला !

.

आज जवानों ने खोल दिए हैं दृढ़ सीने फ़ौलादी,
इनक़लाब के चरण थके कब, जब ज्वाला ही बरसा दी !

.

तुम आँधी बन बढ़ते जाओ, साहस से, उन्मुक्त-निडर,
तुम पर बंदी माँ की ठहरी है रक्षा की आस अमर !

.

शोषित जन-जन साथ तुम्हारे अगणित कंधों का बल,
शत-शत कंठोंका विजयी स्वर गूँज रहा निर्भय अविरल !

.

खेतों-खलिहानों में गिरता है जो शव-रक्त तुम्हारा,
उससे फूटेगा आज़ादी का नूतन कोंपल प्यारा !

.

आगामी सदियाँ समझेंगी उसको निज प्राणों की थाती,
रोज़ जलेगी उस धरती पर बलिदानों की स्मृति-बाती !

.

• •

(308) प्रभंजन

.

आ रहा तूफ़ान है,
जीत का वरदान है,
शक्ति का ही गान है,
देश के अभिमान पर
प्राण का बलिदान है !
आ रहा तूफ़ान है !

.

स्वत्व का संग्राम है,
आज कब विश्राम है
युद्ध जब प्रतियाम है ?
गर्व मिथ्या नष्ट है,
स्वार्थ का क्या काम है ?
स्वत्व का संग्राम है !

.

विश्व में पाखंड जो,
द्वन्द्व है उद्दण्ड जो,
कँप रहा भूखंड जो,
अग्नि में सब जल रहा
हो रहा है खंड जो !
विश्व में पाखंड जो !

.

मुक्ति का उपहार है,
स्नेहमय संसार है,
शांति की झंकार है,
लूट शोषण, नाश की
नीति पर अधिकार है !
मुक्ति का उपहार है !

.

क्रांति का इतिहास है,
पास में विश्वास है,
सृष्टि में मधुमास है,
विश्व की बढ़ती हुई

मिट रही अब प्यास है !
क्रांति का इतिहास है !

.

छिप चुके कटु शूल हैं,
खिल रहे मधु फूल हैं,
कौन जो प्रतिकूल है ?
देख जीवन, आज का
कह रहा जो, 'भूल है' !
छिप चुके कटु शूल हैं !

.

• •

(309) परिवर्तन हो !

.

परिवर्तन हो !
नव-जीवन हो !
जग के कण-कण में
जागृति का नव-कंपन हो !
युग-युग के बाद उठें फिर से
उर-सागर में लहरें सुख की,
स्रोत बहे जीवन का निर्मल !
जन-जन-मन
संसार सुखी हो !
आएँ मधु-क्षण
चिर वंचित संसृति में फिर से,
पात्रा सुधा का भर-भर जाए,
मादक सौरभ,
सपने मीठे,
शांति मधुर हो,
दुनिया का उजड़ा झुलसाया
सूखा उपवन
नन्दन-वन हो !
परिवर्तन हो,
परिवर्तन हो !

.

• •

(310) नया सबेरा

.
सबेरा नया आ रहा है !
.
युगों का अँधेरा मिटाकर,
बड़ा लौह-परदा हटाकर,
सबेरा नया आ रहा है !
.
नयी रोशनी में नहा कर,
पुराना गला सब बहा कर,
सबेरा नया आ रहा है !
.
नवल-शक्ति दुर्जेय भरता,
सबल शत्रु पर वार करता !
सबेरा नया आ रहा है !
.
मनुज को नये गान देता,
सरल स्नेह मुसकान देता,
सबेरा नया, आ रहा है !
.
• •
(311) साधक
.
व्यर्थ सकल आयोजन, बाधक !
इनसे न रुका है, न रुकेगा
निर्झर-सा बहता दृढ़ साधक !
.
पथ पर छायी है बीहड़ता,
युग-जीवन में हिम-सी जड़ता,
पर, पिघल सभी तो जाता है
साहस-ज्वाला का स्रोत अथक !
.
मन की चट्टानों के सम्मुख,
हो जाते हैं तूफ़ान विमुख,
सदा जला है, सदा जलेगा
मानवता का मंगल-दीपक !
.

है मनुज तुम्हारी जय निश्चित,
क्षण-क्षण की सिहरन अपराजित,
परिवर्तन में हो जाएगा
प्रतिक्रियाओं का जाल पृथक !

.

• •

(312) खेतिहर

.

(खेत — बीच-बीच मे फूस की पुरानी जर्जर झोंपड़ियाँ। दिन का जलता हुआ तीसरा प्रहर।
(किसान गुनगुनाता है)

.

उठाओ हल, चलाओ हल !
कि गरमी पड़ रही बेहद

.

(आकाश की ओर देखकर)
आज आकर ही रहेंगे
मेह के बादल !
चलाओ हल, चलाओ हल !

.

(पत्नी से—)
चलो तुम भी
उगानी है अरे मक्का,
अकेले बन न पाएगा
तुम्हारा चाहिए धक्का !

.

पत्नी — (हैरान-सी होकर)
मगर बिटिया
पड़ी बीमार है ज्वर से,
तुम्हें यह सूझता है क्या ?
दिखायी भी नहीं देता
कि वह बेहोश-सी कैसी
पड़ी चुपचाप
बोलो किस तरह उसको
अकेली छोड़कर जाऊँ ?
चढ़ाना है तुम्हें परसाद माता का
कहीं से आज पैसे चाहिए ही,
खेत को छोड़ो

कहीं से दाम की ऐसी जुगत सोचो
कि देवी पा सकें अब भेंट !
कि देवी पा सकें अब भेंट !

.

किसान —
बढ़ता जा रहा है ब्याज,
दस से सौ रकम हा,
हो गयी है आज !
पटवारी हमारे खेत पर हावी,
फ़सल सारी उसी ने ली
कराकर कोठरी खाली !
खड़े हैं हम लुटा कर घर,
भरे ये हाथ अपने झाड़कर !
फिर भी न देगा आज कोई भी
हमें टुकड़े ज़रा से हाय ताँबे के
वही तो धर्म का अवतार पटवारी
बताता है स्वयं को जो
भयंकर रूप धारण कर
हमें दुतकार देता है,
नहीं है आस कोई आज ऋण देगा !

.

बिटिया —
अरे हा !
माँ लगी है भूख
क्या होगा बचा कुछ दूध ?
(शांति ! बिटिया दूध का अभाव समझकर धीमे से)
पानी ही पिला दे, माँ !

.

(माँ पानी देती है। किसान आवेश और दृढ़ता के स्वर में)
अभी लाया रुको जी दूध... !
(विवशता के कारण कंठावरोध। पार्श्व-ध्वनि)

.

मेहनतकश उठो !
बलवान हो तुम,
हल चलाकर ही
उगा सकते अभी सोना,
मिटा दो आततायी का

सभी मिथ्या भरा टोना,
अटल विश्वास जीवन में
तुम्हारा हो सदा संबल,
उठाओ हल, चलाओ हल !

.

किसान (चकित-सा)
धरती गा रही है गीत !
सुनता हूँ नया संगीत !
चलाओ हल,
चलाओ हल !

.

• •

(313) खेतों में

.

(हरे-हरे खेतों से परिपूर्ण एक पहाड़ी ढाल। पास ही एक छोटी, सँकरी नदी बह रही है ; जिसके दोनों किनारों पर पेड़ों की सघन कतारें हैं। सामने के भरे हुए खेतों में छह-छह युवतियों की दोपंक्तियाँ हाथ में हँसिए लिए दिखाई देती हैं और पहली कतार एक स्वर में गाती है।)

.

पहली कतार —

.

आओ सखी, आओ सखी, आओ !
हरे हैं खेत
हरा है मन
भरा यौवन !

.

चलो री सखि !
शिखर पर चढ़
खुशी के ज़िन्दगी के,
आश के गाने
पवन के साथ मिलकर
दूर तक विस्तार कर स्वर प्राण का गाएँ ।
नयन में
फूलती-फलती धरा का स्वप्न भर लाएँ ।

.

दूसरी कतार —

आओ सखी, आओ सखी, आओ !
सुनो, ये खेत हमसे कह रहे हैं क्या !

हिलाकर शीश,
ये संकेत समझो दे रहे हैं क्या ?
हरे हैं ये
भरे हैं ये,

(एक पल रुक कर)

पर, न जाने क्यों डरे से ये ?

.

(खेतों में से अदृश्य पुरुष का स्वर)

सुनो, सुनो, सुनो,
सुनो, सुनो, सुनो,
चोर डाकुओं से सावधान !
कर रहे कि जो
हरे-भरे चमन मसान !
दैत्य से किसान
सावधान, सावधान !

.

(दोनों कतारों की स्त्रियाँ हँसिए को शत्रु पर प्रहार करने की मुद्रा में)

.

कौन है ? कौन है ? कौन है ?

.

अदृश्य पुरुष —

तमाम ये ज़मीनदार,
औ' महाजनी प्रहार
टूटने को हो रहे तैयार ?

किसान—

पहला —

पर, हमें है भय नहीं इसका,
संगठित हैं हम !

.

दूसरा —

ज़माने को बदलने के लिए !

.

तीसरा —

पीड़न और अत्याचार का साम्राज्य
धरती पर सुलाने के लिए !

.

समवेत—
संगठित हैं हम !
संगठित हैं हम ! !

.

(यकायक खेत लहलहाने लगते हैं। पृष्ठभूमि में वृद्ध किसानों की छायाएँ नज़र आती हैं, जिनके हाथों में हँसिए, कुदाली, गेहूँ की बालें और झण्डे हैं।)

.

(पृष्ठभूमि का समवेत स्वर)
माना, भार गुलामी का बरसों ढोया,
पर, जाग नहीं क्या दाग़ पुराना धोया ?
अब तो हमने सोना बोया,
जीवन का दुख सारा खोया ।

.

• •

.

(हज़ारों सुसज्जित सैनिकों का समूह। सभी हाथों में बन्दूकें लिए हुए हैं। सभी की आँखें लाल हैं। एक घुड़सवार तेज़ी से आता है और बिगुल बजाता है। बिगुल के बन्द होते ही स्टेज के पीछे से गान की सशक्त ध्वनि आती है। सैनिक सावधान होकर सुनते हैं।)

.

अभियान करो !
अभियान करो !
किरणें जैसे गिरतीं तम पर,
बहती धारा जैसे बढ़ कर,
वैसी दुर्दम दृढ़ शक्ति लगा
चिर शोषित जनता को आज जगा,
व्यूह रचो,
अभिनव व्यूह रचो !

.

भक्षक संस्कृति की छाती पर
फ़ौलादी आज क़दम रखकर
निर्भय हो
भीषण अभियान करो !
युग-युग की पीड़ित जनता का
त्राण करो !
दुख, दैन्य, निराशा, जड़ता, तम
जीवन का सब

आज हरो !
अभियान करो,
अभियान करो !

.

(स्वर बन्द हो जाता है। एक क्षण सन्नाटा रहता है। दो-एक सैनिक उत्साहित हो कह उठते हैं)

.

भरता साहस विद्युत जैसा
किसने आह्वान किया ऐसा !

.

अन्य सैनिक—

क्या परिवर्तन की बेला ?
क्या नव-जीवन की बेला ?
बदलेगा क्या जीवन का क्रम ?

.

पार्श्व स्वर—

है सत्य,
नहीं यह किंचित भ्रम !
दूर क्षितिज पर
लपटें उठतीं !

.

(सभी सैनिक क्षितिज की ओर देखते हैं और स्वीकृति के स्वर में उत्तर देते हैं।)

.

हाँ, दीख रही हैं
बढ़ती-बढ़ती !
बादल मटमैले धूला के
दिशा-दिशा में फैल गये हैं !
आओ बढ़कर
अभियान करो,
हिम्मत से दृढ़ व्यूह रचो,
गतिरोधी ताक़त से
न डरो,
न डरो !
अभियान करो,
अभियान करो !

समवेत—

दुश्मन पर,
आज विपक्षी पर,

जन-द्रोही पर,
अभियान करो,
अभियान करो !स्स्स

.

(315) जलो-जलो

.

संघर्षों की ज्वाला में जलो, जलो !

.

बलिदान-त्यागमय जीवन हो,
कारागृह भी शांति-सदन हो,
जन-हित, बीहड़ पथ पर भी चलो, चलो !

.

तम से ग्रस्त अवनि ज्योतित हो,
मुरझाया उपवन कुसुमित हो,
मधु-ऋतु के हित युग-हिम में गलो, गलो !

.

• •

(316) जागो

.

जागो, हे जीवन जागो !

.

कूल बढ़े हैं नदियों के,
सोये जागे सदियों के,
मूक-व्यथाएँ खो जाएँ ;
बंदी युग-यौवन जागो !

.

उत्सर्ग भरे गानों से,
प्राणों के बलिदानों से
त्रस्त-मनुज के उद्धारक ;
हे नवयुग के मन जागो !

.

चंचल चपला के उर में,
ज्वालागिरि के अंतर में,
जो हलचल ; उसको लेकर ;
जगती के कण-कण जागो !

.

• •

(317) बलिपंथी

.

हम कब पथ में रुकते हैं ?

.

परिणामों की परवाह न, हम तो कर्मों में तत्पर ;
पल-पल का उपयोग यहाँ, खोने पाये कब अवसर ?
आज़ादी-आन्दोलन में सिर देने वाले सैनिक
अत्याचारों से डर कर कब दुर्बल बन झुकते हैं ?

.

जब आँधी आती है तब जर्जरता मिट जाती है,
विप्लव होता जब जग में, शांति तभी ही आती है,
ज़ंजीरों को तोड़े बिन हम चैन तनिक ना लेंगे—
निज उद्देश्यों के हित, जीवन में सब सह सकते हैं !

.

• •

(318) नव-पथ-राही

.

हम नव-जीवन-पथ के राही!

.

नयी व्यवस्था के संचालक, उन्मुक्त नये युग के मानव,
बहता निर्मल रक्त नसों में,हममें नव-गति,साहस अभिनव

.

अंतिम पल तक संघर्ष अथक, अपराजित-बल, अक्षय-वैभव,
हम निर्भय, मानव-उद्बोधक, राग सुनाते हैं, युग-भैरव,

.

करते ध्वस्त पुरातन, जर्जर जग में लाकर दुर्दम विप्लव,
शीश हथेली पर रखकर हम बढ़ने वाले निडर सिपाही !

.

हम नव-जीवन-पथ के राही !

.

• •

(319) अंतर्राष्ट्रीय गान

.

हम नव प्राणद संदेश लिए
बलिदान सिखाने को आये !

.

हम परिवर्तन की प्यास लिए,
पीड़ित जग में उल्लास लिए,
नव-नव आशा मधुमास लिए,
युग-गान सुनाने को आये !

.

विद्रोही का उच्छ्वास लिए,
धू-धू लपटों-सी श्वास लिए,
पर, मानव पर विश्वास किए,
नव विश्व बनाने को आये !

.

• •

(320) युग-गायक

.

गीत गाता जा रहा हूँ !

.

रक्त की संस्कृति मिटाने को सुनाता हूँ नये स्वर,
मैं दिशा भूले जगत को, हूँ चलाता नव डगर पर,
हर मनुज को घोर तम से रोशनी में ला रहा हूँ !

.

कर रहा हूँ मैं नयी युग-सृष्टि का अविराम चिंतन,
उस नये युग का कि जिसमें है जटिल जीवन न दर्शन,
और जिसको, साँस पर हर, पास अपने पा रहा हूँ !

.

नग्न, दुर्बल, त्रस्त, पीड़ित, नत, बुभुक्षित जो रहे हैं,
दुःख क्या अपमान कटुतर ही सदा जिनने सहे हैं,
जो तिरस्कृत आज तक, उनको उठाता जा रहा हूँ !

.

• •

(321) अभय

.

हैं अमर ये गान मेरे, है अमर मेरी कहानी !

.

हूँ नये युग का मनुज मैं, बद्ध हो पाया न जीवन,
मार्ग में रुकना कहाँ जब पा रहा युग का निमंत्रण,

यदि बदल पाया ज़माना, है तभी सार्थक जवानी !

.

तोड़ बंधन, आज जग को मुक्ति के पथ पर चला दूँ,
हर सड़े विश्वास मिथ्या खोद कर जड़ से बहा दूँ,
है यही कर्तव्य मेरा, इसलिए ही मुक्त वाणी !

.

है नहीं भाता मुझे यह, दूर जा दुनिया बसाऊँ,
चाहता अति तार-स्वर से मैं प्रलय के गीत गाऊँ,
प्रतिध्वनित हो हर हृदय में, रागिनी खोये पुरानी !

.

• •

(322) युग-कवि

.

विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

.

सुन न पड़ती अब अलंकृत रीति-कवि की और वाणी,
मिट चुकी बीते युगों की ईश की कल्पित कहानी,
विश्व ने नव-भावनाओं से नया जीवन रचा है ;
अब विगत युग-भव्यता की, कवि दुहाई दे न पाता !
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

.

आज नव-नव गीत मेरे, आज नव-नव गीत जग के
आज नवयुग, आज गतियुग आज हम बंदी न अग के
लुप्त होती हैं व्यथाएँ और खिलते फूल नव-नव
अब न जीवन में अधूरे छोड़ जग अरमान जाता !
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

.

झूठ, मिथ्या-कल्पनाओं का नहीं है अब ठिकाना
मिट चुकी हैं पूर्ण जड़ से, अब न उनका है बहाना
टिक सकीं बातें अरे क्या खोखलीं जो सब तरफ़ से
आज कण-कण ढह चुका है, कौन जो उसको उठाता ?
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

.

• •

(323) जय-बेला

.

विषाद की नहीं क़यामती-निशा,
न डर कि हिल रही है हर दिशा!
उफ़न रहा समुद्र क्रुद्ध हो,
हरेक व्यक्ति बस प्रबुद्ध हो !
दवारि, साथ लो नवीन जल,
दलिद्र है सभी पुराण बल !

.

• •

(324) शांति-लोक

.

युद्ध की उद्वेग की अब
त्रस्त घड़ियाँ जा रही हैं !

.

सकल दुनिया आज उत्सुक
स्नेह से भर नयन दीपक
गर्म स्वागत के लिए ही गीत मीठा गा रही है !
युद्ध की उद्वेग की अब
त्रस्त घड़ियाँ जा रही हैं !

.

आ रहे सुख के बड़े दिन
आ रहा नव मुक्त-जीवन
आज तो युग-कोकिला मधुमास भू पर ला रही है !
युद्ध की उद्वेग की अब
त्रस्त घड़ियाँ जा रही है !

.

• •

(325) नया संसार

.

बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख
है नया संसार !

.

स्वार्थ में जब विश्व सारा डूब हिंसा कर रहा था,
मनुज अत्याचार से था त्रस्त प्रतिपल डर रहा था,
चल पड़ी तब घोर आँधी

और विप्लव ज्वार !
बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख
है नया संसार !

.

नष्ट जिसमें हो गये सब आततायी क्रूर राक्षस,
और पूँजीवाद तानाशाह की तोड़ी गयी नस,
मुक्त जनता-युग हमारे
सामने-साकार !
बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख
है नया संसार !

.

• •

(326) क़ैदी

.

रात्रि के नीरव प्रहर में
बज उठीं कड़ियाँ,
जब कठिन
घड़ियाँ बिताना हो रहा था
याद सहसा आ गयी —
खामोश ऐसी रात में ही
एक दिन
वे बज उठी थीं
प्रिय तुम्हारे
पैर की पायल !

.

आज तो निस्तब्ध काली रात में
दृढ़ लौह-कड़ियों-सीखचों के बीच
रह-रह खनखनाती बेड़ियाँ निर्मम
और बीते जा रहे
भावों-विचारों में
थके-उलझे हुए
कुछ क्षण !

.

• •

(327) नयी कला

.

नूतन गति दो आज कला को !

.

ओ कवि ! निकले तेरे उर से
स्वर नव-युग के नव-जीवन के,
शांति-सुधा की मधु-लहरों-से
कल-कल निर्झर मधुर स्वरों-से
विश्व नहाता जिनमें जाये
मुसकान मधुर मानव पाये
झूम-झूम कर मस्ती में भर
सुन्दर-सुन्दर कहता जाये
दो नूतन स्वर, नूतन साहस
दो मस्ती का राज कला को !
नूतन गति दो आज कला को !

.

• •

(328) नवयुग

.

रेशमी युगीन-तार हैं नये-नये !
ज़िन्दगी नयी
अकाम भाव बह गये !
समाज से विलीन हो रही है पीर,
कंटका-विहीन हो रहा करीर
डाल-डाल स्वस्थ गुदगुदी
शुष्कता हृदय से हो चुकी जुदी !
देव-देव आज व्यक्ति हर
कर गया निडर निनार पान विष प्रखर !
यातुधान है वही कि जो
ज़रा अड़ा, ज़रा लड़ा
आग देखकर भगा, डरा....
है विदीर्ण अब प्रमाद
क्योंकि बन गया नवीन !
व्यर्थ आज उस मनुष्य का प्रयास
गर्व की पुकार
व्यर्थ, व्यर्थ, व्यर्थ !

.

• •

(329) नव-जीवन

.

गा रहा मधु-गान निर्झर !

.

आज सरि की हर लहर में नृत्य की गति-लय मनोहर,
सृष्टि की आभा नयी बन निखरती जाती निरन्तर,
गा रहा मन गीत सुन्दर
भावनाओं से हृदय भर
कल्पनाओं से हृदय भर !
गा रहा मधु-गान निर्झर !

.

दे रहा वरदान कण-कण !
वेदना-दुख को मिटाकर स्वर्ण का संसार आया,
विश्व के दुर्बल हृदय में शक्ति का सागर समाया,
गूँजता स्वर नभ-अवनि में
आज आया मुक्त-जीवन
आज भाया मुक्त-जीवन !
दे रहा वरदान कण-कण !

.

• •

(30) हरिजन

.

नगर के एक सिरे पर हरिजन-बस्ती। सीकों की अनेक झाड़ू और टोकरियाँ दरवाज़ों के आसपास पड़ी हैं।गरमी में समस्त वायुमंडल तप रहा है। कुछ हरिजन अपनी कुटियों से बाहर निकलकर पेड़ के नीचे बैठे हैं, जिनमें औरतें, बुड्ढ़े-बालक व जवान सभी हैं। शहर में आज इनकी हड़ताल है। आज कुचले हुए सिरों ने अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठायी है —

.

एक युवक — (पड़ा-पड़ा गुनगुनाता है)

.

बीत चुके हैं चार दिवस
हम गये नहीं अपने कामों पर
दृष्टि नगर के जन-जन की
हम पर ही आज लगी है,
क्योंकि नहीं है काम हमारा
औरों के बलबूते !

वर्तमान जीवन के
अभिन्न अंग बने हम,
आज हमारे बिना हुआ
रहना सभ्य मनुजता का
कठिन
असम्भव !

.

युवक की माँ—

रहने दे रे
कुछ न चलेगी तेरी
यों ही कहता फिरता है,
पढ़ आज गया जो थोड़ा-सा
उसके बल
महल हवाई गढ़ता रहता है !
वाचाल ! तुझे क्या पता नहीं
तेरे पुरखे सारे
इनके ही सूखे टुकड़ों पर
पलते आये हैं
पलते जाएंगे !
क्यों कब्र खोदना चाह रहा अपनी
सब की !

.

युवक—

तू क्या जाने जग की आँधी
है साथ हमारे वह गांधी
जिससे 'गोरे' तक डरते हैं
अत्याचार नहीं करते हैं
जिसके पीछे हिन्दुस्तान
करोड़ों इंसान !

.

युवक का दादा—

पर, यह कह देने से
क्या होता है ?
हम तो हैं अब भी
दबे, दुखी औ' दीन पतित !
बाबू लोगों की गाली के

गुस्से के
एकमात्रा इंसान
क्या ?
ना रे इंसान
कहाँ इंसान ?
कुत्तों से भी बदतर !

.

युवक —

यह कैसे कहते हो, दादा !
चाल ज़माना चलता जाता
हम भी क़दम-क़दम बढ़ते जाते,

.

मंदिर सारे
आज हमारे लिए खुले हैं !

.

दादा —

मंदिर आज हमारे लिए खुले हैं
तो क्या उनको लेकर चाटें ?
उनसे न मिलेगी
रहने क़ाबिल आज़ादी !
भगवान हमारा यदि साथी होता
तो क्या इस जीवन से
पड़ता पाला ?
मंदिर तो धनिकों के
ऐयाशी के अड्डे हैं !
तू क्या जाने !

.

युवक —

बस, चाह रहा मैं यह ही तो
समझ सकें हम इन सबका
नंगा रूप
कि बाहर आएँ
युग-युग के बंदी अंध-कूप से
फिर कौन बिगाड़ सकेगा अपना
(कुछ रुक कर)
ऊपर उठ जाएंगे,

नव-जीवन पा जाएंगे !

.

दूसरा युवक—

देखो, सचमुच
कितना बदला आज ज़माना,
चारों ओर सहानुभूति का
और मदद का
धन से, तन से, मन से
मचा हुआ है आन्दोलन !

.

दादा—

ये पंडित पोथीवाले
लाल तिलक वाले
पगड़ी वाले लाला लोग
कि जो रोज़ लगाते मोहन-भोग
आज हमारे जानी दुश्मन !
इनने ही बरबाद किया है जीवन !

.

माँ—

उफ़, न कहो
है लंबी दर्द भरी
युग-युग की करुण कहानी !
क्या होता याद किये से
बीती बातें व्यर्थ-पुरानी !

.

पार्श्व से—

उठो ! पीड़ित, तिरस्कृत
आज युग-युग के सभी मानव,
जगाता है तुम्हें
नूतन जगत का अब नया यौवन !
अमर हो क्रांति
मानव-मुक्ति की नव-क्रांति !

.

• •

(331) भिखारिन

.

सावन की घनघोर घटाएँ उमड़ी पड़ती थीं अम्बर में,

काशी के एक मुहल्ले में, मैं बैठा था अपने घर में !

.

ऊपर की मंज़िल का कमरा था शांत ; परंतु किवाड़ खुले,
सूख रहे थे छाँह-गोख में कुछ धोती-कपड़े धुले-धुले।

.

सघन तिमिर की चादर ने छा सारी वसुधा ढक डाली थी,
पर, थोड़ी-सी ज्योति गोख ने दीपक के कारण पा ली थी!

.

धोती की फर-फर की आहट ने ली दृष्टि खींच जब सहसा,
नेत्र गड़े-से, स्वर मौन रहे, उस क्षण की देख अजीब दशा!

.

करुणा की प्रतिमा-सी युवती चुपचाप खड़ी थी मुख खोले,
जिस पर थीं भय की रेखाएँ, सोच रही थी, क्या वह बोले !

.

फटी-पुरानी साड़ी उलटे पल्ले की पहने थी नारी,
बिखरे-बिखरे सूखे केशों पर सुन्दरता थी बलिहारी !

.

श्याम-वर्ण था, कोकिल से भी मीठी थी जिसकी स्वर-लहरी,
वह बोल उठी हलके स्वर में भरकर व्यथा हृदय में गहरी —

.

कुछ ही महिने बीते मुझको बाबू बंगाला से आये
अन्न अकाल पड़ा था भारी, था जीना दुर्लभ बिन खाये,

.

भूख-भूख की इस ज्वाला में सारा परिवार विलीन हुआ,
घर का धन क्या, शिशुओं तक को बेचा, उर ममताहीन हुआ!

.

जीवन के दुख-दुर्गम पथ पर नश्वर काया की अनुरागिन,
हाय रही जाने क्यों जीवित अब तक मैं ही एक अभागिन !

.

कुछ पैसों की भिक्षा को अब फिरती हूँ नगर-नगर घर-घर,
ऊब चुकी हूँ इस जीवन से सचमुच, जग में रहना दूभर !

.

कुछ दे दो ओ बाबू ! तुम भी दुनिया में खूब फलो-फूलो !
भूखी और दुखी आत्मा की यही दुआ है, सुख में झूलो !'

.

फिर वह दुखिया आँसू भर कर इतना कह बैठ गयी थक कर,

मैं सोच रहा था, दुनिया भी क्या है नग्न विषमता का घर !

.

मेरे उर में जाग उठी थी जीवन की उत्कट अभिलाषा,
पूछूँ इसका पूरा परिचय बतला देगी, थी कुछ आशा।

.

फिर लिखने को युग की गाथा मिल जाएगा सच्चा जीवन,
मिल जाएगा अवसर, करने युग की हीन दशा का चित्रण।

.

जाने कितने दिन की होगी भूखी-प्यासी यह सोच तनिक,
मैंने सोचा इन बातों को अच्छा हो टालूँ सुबह तलक।

.

फिर उसको भोजन-आश्रय दे मैं भी सोने तत्काल गया,
एक प्रहर इस उलझन में ही बीता कब होगा प्रात नया।

.

सुबह-सुबह उठकर जब देखा-केवल पाया अबला का शव,
इसी तरह दम तोड़ रहे हैं जग में जाने कितने मानव !

.

उसको कोई जान न पाया, कितना करुण अकेला जीवन,
कहना,सचमुच, यह मुश्किल है कितना मर्मान्तक था वह क्षण!

.

• •

(332) तारों से

.

तारक नभ में क्यों काँप रहे ?

.

क्या इनके बंदी आज चरण ?
अवरुद्ध बनी घुटती साँसें
इन पर भी होता शस्त्रा-दमन ?
क्या ये भी शोषण-ज्वाला से,
झुलसाये जाते हैं प्रतिपल ?
दिखते पीड़ित, व्याकुल, दुर्बल,
कुछ केवल कँपकर रह जाते,
कुछ नभ की सीमा नाप रहे !

.

क्या दुनिया वाले दोषी हैं ?
सुख-दुख मय जीवन-सपनों में

जब जग सोया, बेहोशी है,
रजनी की छाया में जगती
सिर से चरणों तक डूब रही,
एकांत मौन से ऊब रही,
जब कण-कण है म्लान, दुखी; तब
ये किसको दे अभिशाप रहे ?
.
क्या कंपन ही इनका जीवन ?
युग-युग से दीख रहे सुखमय,
शाश्वत है क्या इनका यौवन ?
गिर-गिर या छुप-छुप कर अविरल
क्या आँखमिचैनी खेल रहे?
स्नेह-सुधा की बो बेल रहे !
अपनी दुनिया में आपस में
हँस-हँस हिल अपने आप रहे !
.
• •

डा. महेंद्रभटनागर, 110 बलवन्तनगर, गांधी रोड, ग्वालियर — 474 002 [म.प्र.]
फ़ोन : 0751- 4092908 / मो. 98 93 40 97 93